शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर

दूरशिक्षण केंद्र

प्रश्नपत्र क्रमांक–A : सत्र–1

सृजनात्मक लेखन

प्रश्नपत्र क्रमांक–B : सत्र 2

व्यावहारिक लेखन

(शैक्षिक वर्ष 2019-20 से)

बी.ए. एवं बी.कॉम. भाग 1 हिंदी (अनिवार्य)

इकाई–1

हिंदी भाषा तथा व्याकरण : सामान्य परिचय

लिंग, वचन, कारक, विराम चिह्न, वाक्य के प्रकार, मानक वर्तनी

अनुक्रम

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 विषय–विवेचन

1.3.1 लिंग

1.3.2 वचन

1.3.3 कारक

1.3.4 विराम चिह्न

1.3.5 वाक्य के प्रकार

1.3.6 मानक वर्तनी

1.4 स्वयं–अध्ययन के लिए प्रश्न

1.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ

1.6 स्वयं–अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

1.7 सारांश

1.8 स्वाध्याय

1.9 क्षेत्रीय कार्य

1.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- लिंग और लिंग-व्यवस्था से परिचित होंगे।
- वचन और वचन-व्यवस्था से परिचित होंगे।
- कारकों के अर्थ और प्रयोग-विधि से परिचित होंगे।
- विराम-चिह्नों के अर्थ और प्रयोग-विधि से परिचित होंगे।
- वाक्य और उसके प्रकारों से परिचित होंगे।
- मानक वर्तनी के नियम और भाषा में प्रयोग-क्षमता से परिचित होंगे।

1.2 प्रस्तावना

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह केवल समाजप्रिय ही नहीं, बल्कि संवेदनशील और विचारशील भी है। मनुष्य के विचार-विनिमय का प्रमुख साधन भाषा है। मनुष्य को प्राप्त वाणी अर्थात् भाषा मानो एक सर्वश्रेष्ठ वरदान ही है। वह भाषा के माध्यम से अपने विचारों एवं भावों को अभिव्यक्त करता है। अत: भाषा ही उसकी अभिव्यक्ति का सहज माध्यम है। हालांकि मनुष्य जिस समाज में रहता है, उसकी अपनी भाषा होती है। प्रत्येक भाषा की संरचना अलग-अलग होती है। प्रत्येक भाषा का उनका अपना व्याकरण होता है। व्याकरण द्वारा ही उस भाषा की शुद्धता के नियम स्पष्ट होते हैं। यह नियम लिखित भाषा पर आधारित होते हैं। लिंग, वचन, कारक. विराम चिह्न, वाक्य के प्रकार, मानक वर्तनी आदि व्याकरण के प्रमुख घटक हैं। इस इकाई के अंतर्गत इन्हीं घटकों का हम अध्ययन करेंगे।

1.3 विषय-विवेचन

इस इकाई के अंतर्गत क्रमश: लिंग, वचन, कारक, विराम चिह्न, वाक्य के प्रकार, मानक वर्तनी आदि की जानकारी प्राप्त करेंगे। प्रस्तुत विवेचन प्रयोजनमूलक हिंदी (भाषिक संरचना, व्याकरण एवं अनुवाद), हिंदी व्याकरण एवं रचना, व्यावहारिक हिंदी व्याकरण, मानक-व्यावहारिक-हिंदी व्याकरण तथा भाषा-बोध आदि के आधार पर किया गया है।

1.3.1 लिंग

हिंदी भाषा में संज्ञा शब्दों के लिंग का प्रभाव उनके विशेषणों तथा क्रियाओं पर पडता है। अत: भाषा के शुद्ध प्रयोग के लिए संज्ञा शब्दों के लिंग-ज्ञान का होना अत्यावश्यक होता है।

'लिंग' का शाब्दिक अर्थ प्रतीक या चिह्न अथवा निशान होता है। संज्ञाओं के जिस रूप से उसकी पुरुष जाति या स्त्री-जाति का पता चलता है, उसे ही 'लिंग' कहा जाता है।

लिंग के दो प्रकार होते हैं- लौकिक और व्याकरणिक। इसमें लौकिक लिंग तीन हैं- नर, मादा तथा निर्जीव या निर्लिंग। इसे ही पुल्लिंग, स्त्रीलिंग तथा नपुंसक लिंग कहा जाता है। अत: संसार में सभी नर जीव पुल्लिंग, मादा जीव स्त्री लिंग और शेष निर्जीव या निर्लिंग हैं। डॉ. माधव सोनटक्के द्वारा लिखित 'प्रयोजनमूलक हिंदी' के आधार पर लिंग-निर्धारण पर सामान्य विवेचन किया जा सकता है।

लिंग-निर्धारण के साधन -

संज्ञा के जिस रूप से उसके स्त्रीवाची या पुरुषवाची होने का बोध हो, उसे लिंग कहते हैं। प्राणिवाचक संज्ञा के लिंग-निर्धारण में प्राकृतिक लिंग के आधार पर उसका लिंग-निर्धारण किया जा सकता है। दूसरी ओर अप्राणिवाचक शब्दों के लिंग बहुत कुछ माने हुए होते हैं। उसका अधिकतर निर्धारण लोक व्यवहार से किया जाता है। साथ ही इसके लिए कुछ साधन भी है। आ. देवेंद्रनाथ शर्मा ने अपनी पुस्तक में प्रमुख चार साधन बताए हैं- 1) अर्थ, 2) रूप, 3) सादृश्य और 4) साहचर्य। जिसका विवेचन इस प्रकार है-

1. अर्थ -

अर्थ के आधार पर लिंग-निर्धारण वहाँ होता है, जहाँ स्पष्टता पुरुष या स्त्री का ज्ञान हो। जैसे- पुरुष (पु.), नारी (स्त्री)। ऐसे ही पति-पत्नी, बैल-गाय आदि के निर्णय में कोई कठिनाई नहीं आती है। किंतु किसी भी भाषा के सभी शब्द प्राणिवाचक ही नहीं होते हैं और प्राणिवाचक में भी सर्वत्र इस नियम का पालन नहीं होता है। जैसे- हिंदी में 'कोयल' शब्द का व्यवहार हमेशा स्त्रीलिंग में होता है, परंतु उसमें भी नर और मादा दोनों हुआ करते हैं।

2. रूप -

व्याकरणिक लिंग-निर्धारण के लिए शब्दों के रूपों की पहचान अधिक सहायक होती हैं। व्याकरणिक लिंग का निर्धारण शब्दों में लगे प्रत्ययों से होता है, अर्थात् शब्दों के रूप प्रत्यय से

ही निर्मित होते हैं। एक प्रत्यय से निष्पन्न सभी शब्द के एक रूप होते हैं। इसलिए प्रत्येक भाषा लिंग-निर्धारण में रूपों की सहायता लेती है। जैसे- संस्कृत में नियम है कि, 'धञ्' प्रत्यय से बने सभी शब्द पुल्लिंग होंगे। हिंदी में 'आ' प्रत्यय से बने शब्द पुल्लिंग हैं तथा 'ई' प्रत्यय से बने शब्द स्त्रीलिंग। जैसे कि, लड़का > लडकी, घोडा > घोडी, बकरा > बकरी। फिर भी सभी शब्दों का लिंग-निर्धारण मात्र रूपों के आधार पर नहीं होता है। जैसे कि, पति-पत्नी दोनों के अंत में 'इ' है, लेकिन दोनों अलग-अलग लिंगी शब्द है।

3. सादृश्य -

बहुत सारे शब्दों का लिंग दूसरे शब्दों के अर्थगत् या रूपगत् सादृश्य के कारण निर्धारित होता है। जैसे- 'पूँछ' शब्द के रूपगत सादृश्य के आधार पर 'मूँछ' भी स्त्रीलिंगी रूप में प्रयुक्त होता है। इसमें अरबी-फारसी शब्दों का प्रभाव दृष्टिगत होता है। आचार्य देवेंद्रनाथ शर्मा के शब्दों में- ''इस असंगति पर विचार करने के बाद में इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि इन शब्दों में लिंग-विपर्यय में फारसी-अरबी के तद्र्थबोधक शब्दों का प्रभाव हैं। एक भाषा बोलने का जैसा अभ्यास रहता है, दूसरी भाषा बोलते समय उसका प्रभाव अनायास पड़ जाता है। जैसे- हिंदी में बहुत सारे परिवर्तन, विशेषकर वाक्यों में, अंग्रेजी के प्रभावस्वरूप हुए हैं।'' अत: यह परिवर्तन सादृश्य के प्रभाव स्वरूप स्पष्ट होता है।

4. साहचर्य -

साहचर्य से कुछ शब्दों के लिंगों में परिवर्तन होता रहा है। जैसे- 'धूप-छाँह' इस शब्द में 'धूप' शब्द मूलत: पुल्लिंग है, लेकिन 'छाँह' शब्द के साहचर्य के कारण उसका प्रयोग स्त्रीलिंग में होने लगा है।

संक्षेप में, किसी भी भाषा की लिंग-व्यवस्था ऋतु-रेखा में चलनेवाली वस्तु नहीं होती है। वह कई प्रकार से प्रभावित होकर परिवर्तित भी होती रहती है। अत: उसके लिए अपवादहीन नियम नहीं बनाए जा सकते हैं। इस दृष्टि से डॉ. हरदेव बाहरी व्याकरणिक लिंग-निर्धारण में लोक-व्यवहार को ही महत्त्वपूर्ण स्थान देते हैं।

हिंदी लिंग-व्यवस्था : ऐतिहासिक संदर्भ

हिंदी का विकास संस्कृत से हुआ है। इसलिए उसमें जहाँ अपना वैशिष्ट्य है, वहाँ संस्कृत के वैशिष्ट्य का समन्वय भी है। जैसे कि, बेटी अपनी माँ से भिन्न होती हुई भी वह बहुत सारी

विशेषताएँ लेकर ही उत्पन्न होती है। वह अपने समय और अपनी जरूरतों के अनुरूप अपने व्यक्तित्व को बनाती है। लिंग-व्यवस्था के थरातल पर भी संस्कृत और हिंदी में इसी तरह का संबंध रहा है।

भाषा का विकास कठिन से सरल की ओर होता है। इसी नियम के तहत संस्कृत से हिंदी तक आते-आते भाषा में क्लिष्टता को छोड़कर सरलता को अपनाने का प्रयास दिखाई देता है। फिर भी इसी प्रयास में कभी, कुछ क्लिष्टता आ ही जाती है। साथ ही लिंग-व्यवस्था में अनियमितता भी दिखाई देती है। यह बात संस्कृत तथा आर्य भाषाओं से स्पष्ट होती है। इसी परिप्रेक्ष्य में अपभ्रंशों से विकसित आधुनिक आर्य भाषाओं के लिंग के आधार पर तीन वर्ग बनाए जा सकते हैं-

1) प्रथम वर्ग पश्चिमोत्तरी है, जिसमें हिंदी, पंजाबी, सिंधी, राजस्थानी आदि हैं। यह वर्ग बिना किसी प्रभाव के अपभ्रंश का सहज विकास है।

2) दूसरा वर्ग बंगला-असमी-उड़िया तथा अंशत: बिहारी का है। इस पूर्वी वर्ग पर तिब्बती-बर्मी एवं कोल भाषाओं का प्रभाव पड़ा है। इसी कारण इसमें लिंग-भेद बहुत ही कम है।

3) तीसरा वर्ग दक्षिणी है, जिसमें मराठी, गुजराती है। यह द्रविड भाषाओं से प्रभावित है। इसीकारण अभी तक इन भाषाओं में तीन लिंग हैं। पुरानी पश्चिमी राजस्थानी तथा मारवाडी भी इसी वर्ग में आती है।

अत: हिंदी प्रथम वर्ग की भाषा है। इसमे पुल्लिंग और स्त्रीलिंग दो ही लिंग हैं। सन्धिकालीन हिंदी में नपुंसक लिंग के अवशेष दीख पड़ते हैं, लेकिन आधुनिक हिंदी में केवल कुछ प्रयोगों में नपुंसक लिंग का प्रयोग मिलता है। अधिकांश रूप में नपुंसक लिंग लुप्त-सा है। इसी तरह हिंदी की प्राचीन भाषाओं की तुलना में एक लिंग कम हुआ है। अत: पूर्ववर्ती 'नपु.' शब्द हिंदी में पुल्लिंग या स्त्रीलिंग में अन्तर्भूत हो गए हैं।

हिंदी शब्दों के लिंग-निर्णय : कुछ नियम -

हिंदी की लिंग-व्यवस्था संस्कृत-लिंग-व्यवस्था के कुछ विधान से या कुछ अपने नये-विधान से बनी है। यद्यपि शब्दों के लिंग-निर्धारण के विशेषकर अप्राणिवाचक संज्ञाओं के कोई व्यापक और सिद्ध नियम नहीं है। अधिकांश रूप में उसका निर्धारण लोक-व्यवहार से किया जाता है। इसी परिप्रेक्ष्य में लिंग-निर्णय के कुछ नियम इस प्रकार हैं-

अ) रूप की दृष्टि से लिंग-निर्णय –

रूप या बनावट की दृष्टि से लिंग-निर्णय दो होते हैं- पुल्लिंग और स्त्रीलिंग।

I. पुल्लिंग संज्ञाएँ –

रूप या बनावट की दृष्टि से पुल्लिंग शब्दों की पहचान इस प्रकार की जा सकती हैं-

1) संस्कृत के वे शब्द, जिनके अंत में 'ख' या 'ज' प्रत्यय होता है। जैसे- सुख, दुःख, मुख, जलज, सरोज, अनुज आदि।

2) संस्कृत के वे शब्द, जिनके अंत में 'अ' प्रत्यय होता है। जैसे- कौशल, शैशव, वाद, वेद, मोह, दोष आदि। अपवाद स्वरूप जय (स्त्रीलिंगी), विनय (उभयलिंगी) होते हैं।

3) संस्कृत के वे शब्द, जिनके अंत में 'अन' प्रत्यय होता है। जैसे- साधन, बंधन, दान, वचन, चयन, पालन आदि। अपवादस्वरूप पवन (उभयलिंगी) होता है।

4) संस्कृत के वे शब्द जिनके अंत में 'त्र' प्रत्यय होता है। जैसे- शस्त्र, शास्त्र, पत्र, पात्र, नेत्र, चरित्र, क्षेत्र, चित्र आदि।

5) संस्कृत के वे शब्द, जिनके अंत 'त' प्रत्यय होता है। जैसे- गीत, गणित, आगत, स्वागत, चरित आदि।

6) संस्कृत की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'त्व' प्रत्यय होता है। जैसे- व्यक्तित्व, कृतित्व, गुरूत्व, बहुत्व, मनुष्यत्व, पत्नीत्व, पुरुषत्व आदि।

7) संस्कृति की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'य' प्रत्यय होता है। जैसे- माधुर्य, सौंदर्य, धैर्य. शौर्य, कार्य आदि।

8) हिंदी की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'आ' प्रत्यय आता है। जैसे- घड़ा, कपड़ा, घेरा, फेरा, झंड़ेवाला, टोपीवाला, आटा, माथा, गन्ना आदि।

9) हिंदी की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'आव' या 'आवा' प्रत्यय होता है। जैसे- बहाव, घुमाव, पडाव, बहकाव, डरावा, भुलावा आदि।

10) हिंदी की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'ना' प्रत्यय लगाकर क्रियार्थक संज्ञाएँ बनती है। जैसे- लेना, देना, सोना, चलना, तैरना आदि।

11) हिंदी के वे शब्द, जिनके अंत में 'पा' या 'पन' प्रत्यय लगता है। जैसे- बुढापा, रँडपा, भोलापन, लड़कपन आदि।

12) हिंदी के वे शब्द, जिनके अंत में कृदंत 'आन' प्रत्यय होता है। जैसे- खानपान, मिलान, लगान आदि। अपवाद रूप में स्त्रीलिंग उड़ान, पहचान, मुस्कान आदि शब्द भी प्रयुक्त होते हैं।

13) वे शब्द जिनके अंत में अरबी-फारसी का 'खाना' प्रत्यय होता है। जैसे- चिड़ियाखाना, डाकखाना, गाड़ीखाना आदि।

14) वे शब्द, जिनके अंत में अरबी-फारसी का 'दान' प्रत्यय होता है। जैसे- कमलदान, फुलदान, गुलाबदान आदि।

II. स्त्रीलिंगी संज्ञाएँ -

रूप या बनावट की दृष्टि से स्त्रीलिंगी शब्दों की पहचान इस प्रकार की जा सकती.हैं-

1) संस्कृत की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'अना' प्रत्यय होता है। जैसे- वेदना, वंदना, सूचना, कल्पना, सांत्वना, प्रस्तावना, घटना, रचना आदि।

2) संस्कृत की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'आ' प्रत्यय होता है। जैसे- माया, दया, शोभा, शिक्षा, पूजा, कृपा, क्षमा आदि।

3) संस्कृत की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'इ' प्रत्यय होता है। जैसे- निधि, विधि, अग्नि, कृषि, रूचि, छवि आदि।

गिरि, बलि, जलधि, पाणि आदि संज्ञाएँ इसके लिए अपवाद है।

4) संस्कृत की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'ति' या 'नि' प्रत्यय होता है। जैसे- रीति, प्रीति, तृप्ति, जाति, शक्ति, गति, हानि, ग्लानि, बुद्धि, सिद्धि आदि।

5) संस्कृत के वे शब्द जिनके अंत में 'या' तथा 'सा' प्रत्यय होता है। जैसे- विद्या, क्रिया, मीमांसा, पिपासा आदि।

6) संस्कृत के वे शब्द, जिनके अंत में तद्वित प्रत्यय 'इमा' होता है। जैसे- कालिमा, लालिमा, महिमा, गरिमा आदि।

7) संस्कृत के वे शब्द, जिनके अंत में 'ता' प्रत्यय होता है। जैसे- लघुता, प्रभुता, नम्रता, एकता, दरिद्रता, गंभीरता, सुंदरता, योग्यता, प्रभुता आदि।

8) संस्कृत की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'उ' प्रत्यय होता है। जैसे- धातु, ऋतु, वस्तु, मृत्यु, वायु, रेणु, आयु आदि।

9) हिंदी के बहुधा ईकारांत शब्द, अर्थात् जिनके अंत में 'ई' प्रत्यय होता है। जैसे- रोटी, टोपी, गली, चिंटी, नदी, उदासी आदि। अपवादस्वरूप पानी, घी, दही, मोती आदि शब्द पुल्लिंग होते हैं।

10) हिंदी की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'इया' प्रत्यय होता है। जैसे- डिबिया, पुडिया, लुटिया, खटिया आदि।

11) हिंदी की प्राय: वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'ख' प्रत्यय होता है। जैसे- ईख, चीख, कोख, भूख, मेख, आँख आदि। अपवाद स्वरूप रूख, पाख आदि शब्द पुल्लिंग में आते हैं।

12) हिंदी की धातुओं से 'अ' प्रत्यय लगकर बनी संज्ञाएँ इस प्रकार हैं। जैसे- पकड, दगड, लगन. मार, पुकार, चोट, छूट, कराह, अकड, झपट, तडप, खोज, समझ आदि। अपवाद स्वरूप खेल, नाच, मेल, बोल, बिगाड आदि पुल्लिंग में होते हैं।

13) हिंदी की भाव-वाचक संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'ट', 'वट', 'हट' प्रत्यय होते हैं। जैसे- आहट, चिकनाहट, झंझट, घबराहट, सजावट, मिलावट, चिल्लाहट आदि।

14) हिंदी की धातुओं में 'अन' प्रत्यय लगकर बनी संज्ञाएँ इस प्रकार हैं। जैसे- रहन, सहन, पहचान, जलन, उलझन आदि।

15) हिंदी की 'आई' प्रत्यय वाली संज्ञाएँ इस प्रकार हैं। जैसे- लिखाई, ऊँचाई, सिलाई, बनवाई, लंबाई आदि।

16) अरबी-फारसी के वे शब्द, जिनके अंत में 'श' होता है। जैसे- तलाश, मालिश, कोशिश आदि।

17) अरबी-फारसी की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में 'त' प्रत्यय होता है। जैसे- कीमत, मुलाकात, दौलत, नफरत आदि।

18) अरबी-फारसी की वे संज्ञाएँ, जिनके अंत में, 'आ' तथा 'ह' प्रत्यय आता है। जैसे- सजा, दवा, सलाह, राह, आह, सुबह आदि।

19) हिंदी की ऊकारांत संज्ञाएँ इस प्रकार हैं। जैसे- झाडू, दारू, बालू, गेरू आदि। अपवाद स्वरूप आँसू, टेसू, आलू, रतालू, आदि के रूप पुल्लिंग में होते हैं।

20) हिंदी की अनुस्वारान्त संज्ञाएँ इस प्रकार है। जैसे- भौं, चूँ, खडाऊँ आदि। अपवाद स्वरूप कोढों, गेहूँ आदि के रूप पुल्लिंग में होते हैं।

आ) लोक–व्यवहार की दृष्टि से लिंग–निर्णय –

कुछ शब्द रूप या बनावट की दृष्टि से समान होते हुए भी उनमें से कुछ पुल्लिंग होते हैं और कुछ स्त्रीलिंग। ऐसे शब्दों का लिंग–निर्धारण लोक–व्यवहार से करना पडता है।

I) पुल्लिंग शब्द –

नमक, पनघट, ओंठ, नीड, बाल, निकाल, गुलाब, काठ, आलू, पहलू, मधु, हिसाब, आम, मरहम, मोम, तालू, ढोंग, अखरोट, मुँह, ब्याह, निबाह, खेत, सूत, मुकूट आदि।

II) स्त्रीलिंग शब्द –

मिठास, झील, खाल, बास, बालू, वायु, आयु, नाक, उमंग, उर्दू, चेचक, छत, बात, किताब, शराब, मार, नस, ईंट, ओट, गाँठ, रात, लात, आड, जड, चिलम, नहर, उमंग आदि।

इ) अर्थ की दृष्टि से लिंग–निर्णय –

अर्थ की दृष्टि से कुछ शब्द पुल्लिंग, कुछ स्त्रीलिंग और कुछ शब्द उभय लिंगी होते हैं। उसका विवेचन निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है–

I) पुल्लिंग शब्द –

अर्थ की दृष्टि से निम्नलिखित प्रकार के शब्द पुल्लिंग होते हैं। इनमें जो अपवाद स्वरूप स्त्रीलिंग में आते हैं, उनके अंत में प्राय: 'इ' प्रत्यय आता है।

1. **धातुओं के नाम :** पारा, पीतल, सोना, रूपा, तांबा, सीसा, काँस आदि। अपवाद स्वरूप 'चांदी' स्त्रीलिंगी है।
2. **रत्नों के नाम :** नीलम, पुखराज, माणि, मोती, हीरा, मूँगा, जवाहर, पन्ना, लाल आदि। अपवाद स्वरूप मणि, चुन्नी, लालडी आदि स्त्रीलिंग में आते हैं।
3. **भोज्य पदार्थों के नाम :** रायता, हलुवा, समोसा, चाकलेट, पुआ, पेडा, भात आदि। अपवाद स्वरूप पूरी, जलेबी, मिठाई, दाल, रोटी, तरकार, स्त्रीलिंग में आते हैं।
4. **अनाजों के नाम :** तिल, मटर, बाजरा, चना, गेहूँ, चावल, जौ, उडद आदि। अपवाद स्वरूप दाल, तिल, मटर आदि स्त्रीलिंग में आते हैं।
5. **दिनों के नाम :** सोम, मंगल आदि।

6. **महिनों के नाम :** माघ, पौष आदि।

7. **भौगोलिक नाम :** हिंद महासागर, विंध्याचल, हिमाचल, सागर, दविप, पर्वत, रेगिस्तान, प्रांत, नागर, वायुमंडल, नभोमंडल, सरोवर आदि। अपवाद स्वरूप झील, घाटी स्त्रीलिंग में आते हैं।

8. **देशों के नाम :** इंग्लैंड, इटली, रूस, भारत आदि।

9. **ग्रहों के नाम :** बृहस्पति, सूर्य, चंद्र, बुध आदि। अपवाद स्वरूप पृथ्वी आदि स्त्रीलिंग में आते हैं।

10. **पेडों के नाम :** जामन, अमरूद, नींबू, सेब, पीपल, बरगद, सागौन, शीशम, अखरोट, अशोक आदि। अपवाद स्वरूप इमली, नीम आदि स्त्रीलिंग में आते हैं।

11. **द्रव पदार्थों के नाम :** काढा, अर्क, तेल, घी, पानी, शर्बत, इत्र आदि।

II) स्त्रीलिंग शब्द –

अर्थ के अनुसार निम्नलिखित प्रकार के शब्द स्त्रीलिंग में आते हैं–

1. **नक्षत्रों के नाम :** रोहिणी, भरणी, कृतिका, आर्द्रा, अश्विनी आदि।

2. **नदियों के नाम :** रावी, सतलज, गंगा, यमुना, सरस्वती, झेलम आदि। अपवाद स्वरूप ब्रहमपुत्र, सिंधु आदि पुल्लिंग में आते हैं।

3. **झीलों के नाम :** साँभर, चिलका आदि।

4. **तिथियों के नाम :** द्वितीया, तीज, अष्टमी, अमावस्या आदि।

5. **संस्कृत की प्राय: भाववाचक संज्ञाएँ :** इच्छा, अर्चना, गरिमा, कटुता, ऋद्धि आदि।

6. **बनिए के दुकान की चीजें :** दालचिनी, मिर्च, हल्दी, सुपारी, हिंग, इलायची, लौंग आदि।

III) उभय लिंगी शब्द –

हिंदी के कुछ ऐसे शब्द हैं, जो पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग दोनों में प्रयुक्त होते हैं। इनमें से कुछेक का अर्थ के अनुसार लिंग बदल जाता है। अत: वाक्य में वे जिस अर्थ में प्रयुक्त किए जाते हैं, उसके अनुरूप उनका लिंग-निर्धारण होता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

शब्द	पुल्लिंग होने पर अर्थ	स्त्रीलिंग होने पर अर्थ
कोटि	करोड़	श्रेणी
टीका	तिलक	टिप्पणी, अर्थ
पीठ	स्थान	पृष्ठभाग
शान	औजार तेज करने का पत्थर	ठाठ-बाट, प्रभुत्व
दाद	चर्मरोग	प्रशंसा
हार	माला	पराजय
कुशल	प्रवीण	खैरियत
घाव	चोट	दाँव-पेंच
चूडा	कंगन	चोटी
झाल	बाजा	लहर
धातु	शब्द का मूल	खनिज, वीर्य
नस	नस्य, सुँघनी	स्नायु, रग
बेर	फलवृक्ष	दफा या बार
रेत	वीर्य	बालू
हाल	समाचार, दशा	चक्के पर लोहे का घेरा

1.3.2 वचन

भाषा में लिंग के जैसा वचन का अपना स्थान होता है। बिना वचन के संख्या आदि का ज्ञान नहीं होता है। जिस रूप में संज्ञा अथवा दूसरे विकारी शब्दों की संख्या का बोध होता है तथा एक या एक से अधिक का भेद मालूम हो, उसे वचन कहा जाता है।

वचन एक व्याकरणिक कोटि (तत्त्व) है। वह अन्य की अपेक्षा सरल है। इस संदर्भ में डॉ. द्विजराम यादव अपने ग्रंथ 'प्रयोजनमूलक हिंदी व्याकरण' में कहते हैं कि, ''संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा क्रिया के जिस रूप से संख्या का बोध होता है, उसे वचन कहते हैं, अर्थात् शब्दों के विकारी रूपों को वचन कहा जाता है।'' तात्पर्य यह है कि व्याकरण की दृष्टि से शब्द के जिस रूप से (वस्तु अथवा प्राणी) संख्या का ज्ञान होता है, उसे वचन कहते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता

है कि संज्ञा के (शब्द) जिस रूप से एक (एकत्व) या अधिक संख्या (अनेकत्व) के अर्थ का पता चलता है, उसे वचन कहा जाता हैं।

हिंदी में वचन का विकास संस्कृत से ही हुआ है। इसके बावजूद संस्कृत में जहाँ तीन वचन थे, वहाँ हिंदी में दो ही रह गए। भारोपीय परिवार की भाषाओं में तीन वचन प्रचलित थे- एकवचन, द्विवचन और बहुवचन। संस्कृत में द्विवचन तो प्रचलित था, पर उसका प्रयोग बहुत ही कम मात्रा में होता था। इस अल्प प्रयोग के कारण ही पालि में इसका लोप हो गया। पूरे मध्यकालीन आर्यभाषा- काल में द्विवचन का प्रयोग कुछ अपवाद स्वरूप ही मिलता है। प्राय: उसके स्थान पर बहुवचन का ही प्रयोग होता है। अत: संस्कृत से हिंदी में वचन के क्षेत्र में कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। फलत: वचन-व्यवस्था के कुछ नियम निर्धारित होते हैं। उन पर विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है।

हिंदी वचन-व्यवस्था और वचन-निर्धारण के नियम -

वचन प्रणाली विविध भाषाओं में अलग-अलग रूपों में मिलती है। संस्कृत, ग्रीक, अफ्रीकी, लैटिन आदि भाषाओं में तीन वचन पाए जाते हैं- एकवचन, द्विवचन, बहुवचन और फिजी जैसी भाषा में चार वचन मिलते हैं- एकवचन, द्विवचन, त्रिवचन और बहुवचन। इसी परिप्रेक्ष्य में आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में दो वचन की व्यवस्था पाई जाती हैं- एकवचन और बहुवचन। यही व्यवस्था मराठी, गुजराती आदि में बराबर-सी है।

हिंदी भाषा में केवल दो ही वचन हैं- 1) एकवचन और 2) बहुवचन। इसमें बहुवचन का क्षेत्र बड़ा व्यापक है।

साधारणत: व्यक्तिवाचक, भाववाचक तथा द्रव्यवाचक संज्ञाओं का प्रयोग एकवचन में होता है। इसके सिवा जातिवाचक या समूहवाचक संज्ञाएँ दोनों वचनों में प्रयुक्त हो सकती है। इस दृष्टि से वचन-व्यवस्था और वचन-निर्धारण के विविध नियमों पर विचार किया जा सकता है। अत: वचन-निर्धारण के संदर्भ में व्यावहारिक हिंदी व्याकरण तथा प्रयोजनमूलक हिंदी आदि के आधार पर विवेचन किया जा सकता है।

1. एकवचन -

शब्द के जिस रूप से एक ही वस्तु या एक ही प्राणी का बोध हो (एक वस्तू सूचित करानेवाली संज्ञा) उसे एकवचन कहते हैं। जैसे- घोडा, कलम, लडकी, लता, थाली, बात, बहन आदि।

2. बहुवचन –

शब्द के जिस रूप से अनेक वस्तुओं या प्राणियों का बोध होता है (एक से अधिक वस्तुओं का बोध कराने वाली संज्ञा) उसे बहुवचन कहते हैं। जैसे- घोडे, कलमें, लड़कियाँ, लताएँ, थालियाँ, बातें, बहनें आदि।

बहुवचन-निर्धारण के नियम –

भाषा में वचन का अपना स्थान होता है। बिना वचन के संख्या, ज्ञान आदि नहीं होता है। वास्तविक रूप में किसी शब्द के वचन की पहचान वाक्य में उसके प्रयोग आदि के आधार पर ही आसानी से हो सकती है। वाक्य में प्रयुक्त संज्ञा या सर्वनाम आदि शब्दों के साथ विभिन्न कारक चिह्नों का भी प्रयोग होता है। उन्हीं के अनुसार ही एकवचन या बहुवचन होने का निर्णय होता है। इसी परिप्रेक्ष्य में विभक्तिरहित शब्दों और विभक्तिसहित शब्दों के वचन-निर्धारण के अलग-अलग नियम दृष्टिगत होते हैं। अत: उन्हीं के आधार पर वचन-निर्धारण करना युक्तिसंगत होगा।

अ) विभक्तिरहित बहुवचन –

विभक्तिरहित बहुवचन बनाने के अलग-अलग नियम इस प्रकार हैं-

1. आकारांत पुल्लिंग संज्ञाओं के अंतिम 'आ' को 'ए' में परिवर्तित कर उसे बहुवचन में रूपांतरित किया जाता है। जैसे- बकरा-बकरे, बच्चा-बच्चे, घोडा-घोड़े, लड़का-लड़के, कमरा-कमरे आदि।

अपवाद संज्ञाएँ –

I) कुछ आकारांत संबंध-सूचक संज्ञाओं (भतीजा, बेटा, पोता, साला आदि) को छोड़कर शेष आकारांत संबंधवाचक संज्ञाएँ तथा उपनामवाचक या प्रतिष्ठावाचक पुल्लिंग संज्ञाएँ दोनों वचनों में एक-सी रहती है। जैसे- काका, मामा, लाला, आज्ञा आदि।

II) संस्कृत की आकारात पुल्लिंग संज्ञाएँ, दोनों वचनों में एक-सी रहती हैं। जैसे- देवता, कर्ता, युवा, पिता, योद्धा आदि।

III) आकारांत पुल्लिंग संज्ञाओं को छोड़कर शेष पुल्लिंग संज्ञाएँ दोनों वचनों में एक-सी रहती हैं। जैसे- बालक, मुनि, भाई, चौबे, जौ, विद्वान, साधू, डाकू आदि।

2. आकारांत, उकारांत या ओकारांत स्त्रीलिंग संज्ञाओं के अंत में 'एँ' प्रत्यय जोडने से वह बहुवचन में परिवर्तित होती है। जैसे- ऋतु- ऋतुएँ, गौ- गौएँ, लता- लताएँ, कन्या- कन्याएँ, माला- मालाएँ आदि।

3. आकारांत स्त्रीलिंग संज्ञा शब्दों के अंतिम 'अ' स्वर को 'एँ' में बदलने से वह बहुवचन में परिवर्तित होती है। जैसे- रात- रातें, आँख- आँखें, लहर- लहरें, पुस्तक- पुस्तकें आदि।

4. इकारांत स्त्रीलिंग शब्दों के अंत में 'याँ' प्रत्यय जोडने से वह बहुवचन में परिवर्तित होता है। जैसे- तिथि- तिथियाँ, गति- गतियाँ आदि।

5. ईकारांत स्त्रीलिंग शब्दों के अंत में यदि दीर्घ 'ई' स्वर होता, तो बहुवचन बनाते समय वह ऱ्हस्व हो जाता है। जैसे- रोटी- रोटियाँ, कापी- कापियाँ, लडकी- लडकियाँ, डाली- डालियाँ आदि।

6. जिन स्त्रीलिंग शब्दों के अंत में 'या' होता है, उसका अनुनासिक चिह्न लगाकर बहुवचन बनाया जाता है। जैसे- डिबिया- डिबियाँ, गुडिया- गुडियाँ, चिडिया- चिडियाँ, चुहिया- चुहियाँ आदि।

7. उर्दू शब्दों के बहुवचन कई रूपों में मिलते हैं-

   I) उर्दू के कई शब्दों के बहुवचन बहुधा हिंदी प्रत्यय लगकर बनते हैं। जैसे- शाहजादा-शाहजादे, शादी-शादियाँ, बेगम-बेगमें, खाला-खालाएँ आदि।

   II) अप्राणिवाचक संज्ञाओं में बहुधा 'आत' जोडकर बहुवचन में परिवर्तित किया जाता है। जैसे- तसलीम- तसलीमात, मकान- मकानात, कागज- कागजात, देह- देहात आदि।

   III) प्राणिवाचक संज्ञाओं में बहुधा 'आन' जोडकर उसका बहुवचन बनाया जाता है। जैसे- बिरादर- बिरादरान, गवाह- गवाहान, मालिक- मालिकान, साहिब- साहिबान आदि।

8. जिन मनुष्यवाचक पुल्लिंग संज्ञाओं के रूप दोनों वचनों में एक-से रहते हैं, उनके बहुवचन में बहुधा 'लोग', 'गण', 'जाति', 'जन', 'वर्ग' आदि शब्द जोड दिए जाते हैं। जैसे- राजा लोग, ऋषि लोग, तारांगण, बालकगण, देव जाति, विद्वज्जन, पाठक वर्ग आदि।

आ) विभक्तिसहित बहुवचन –

वाक्य में संज्ञा या सर्वनाम शब्दों के साथ विभिन्न कारक-चिह्नों का प्रयोग होता है। उन्हीं कारक चिह्नों (ने, को, से, का, की, के, में, पर) के अनुसार एकवचन के शब्द बहुवचन में परिवर्तित हो जाते हैं। उसके नियम इस प्रकार हैं-

1. अकारांत या आकारांत पुल्लिंग शब्दों के अंतिम स्वर को 'ओं' में बदल कर उसका बहुवचन बनाया जाता है। जैसे- बालक- बालकों ने, बालकों को, बालकों से, बालकों का, बालकों की, बालकों के, बालकों पर, बालकों में। इसी तरह लडका, कमरा, डिब्बा, मित्र, घर आदि शब्दों को उक्त प्रत्यय लगाकर बहुवचन में परिवर्तित किया जा सकता है।

2. कुछ आकारांत पुल्लिंग शब्दों के अंत में 'ओं' जोडकर उसे बहुवचन में परिवर्तित किया जाता है। जैसे- राजा- राजाओं ने, राजाओं को, राजाओं से।

3. सभी आकारांत स्त्रीलिंग संज्ञा शब्दों के अंत में 'ओं' जोडकर उसे बहुवचन में परिवर्तित किया जाता है। जैसे- कन्या- कन्याओं ने, कन्याओं को, कन्याओं से। माता- माताओं ने, माताओं को, माताओं से।

4. इकारांत शब्दों के अंत में 'यों' जोडकर उसे बहुवचन में परिवर्तित किया जाता है। जैसे

   विधि- विधियों ने, विधियों को, विधियों से।

   पति- पतियों ने, पतियों को, पतियों से।

5. ईकारांत शब्दों के अंत में 'यों' जोडकर उसे बहुवचन में परिवर्तित किया जाता है। वहाँ पर अंतिम दीर्घ 'ई' ऱ्हस्व 'इ' हो जाता है। जैसे-

   पत्नी- पत्नियों ने, पत्नियों को, पत्नियों से।

   नदी- नदियों ने, नदियों को, नदियों से।

   माली- मालियों ने, मालियों को, मालियों से।

6. उकारांत शब्दों के अंत में 'ओं' जोडकर उसे बहुवचन में परिवर्तित किया जाता है। जैसे-

   वधु - वधुओं ने, वधुओं को, वधुओं से।

   पशु - पशुओं ने, पशुओं को, पशुओं से।

7. ऊकारांत शब्दों के अंत में 'ओं' जोडकर उसे बहुवचन में परिवर्तित किया जाता है। वहाँ पर अंतिम दीर्घ 'ऊ' ऱ्हस्व 'उ' हो जाता है। जैसे-

हिंदू - हिंदुओं ने, हिंदुओं को, हिंदुओं से।

भालू - भालुओं ने, भालुओं को, भालुओं से।

8. सम्बोधन कारक में सभी बहुवचन रूपों का अंतिम अनुस्वार हटाकर लिखा जाता है। जैसे-

हे सज्जनो, ओ लडकियो, अरे लडको आदि।

9. 'बेटा' और 'बच्चा' संज्ञाएँ सम्बोधन कारक के एकवचन में बहुधा अविकृत रहती है। जैसे-

हे बेटा! तुम कहाँ हो?

अरे बच्चा! यहाँ आ।

हिंदी वचन तथा कारक-प्रत्ययों का व्युत्पत्तिगत परिचय-

विद्वानों में विभक्तिरहित तथा विभक्तिसहित वचन-बोधक हिंदी के कारक-प्रत्ययों की व्युत्पत्ति के संबंध में मतभेद हैं। उस पर 'प्रयोजनमूलक हिंदी' के आधार पर विचार किया जा सकता है। जो इस प्रकार है-

1. शून्य प्रत्यय -

पुल्लिंगी व्यंजनात तथा कुछ स्वरांत संज्ञा में प्रथमा एकवचन तथा बहुवचन रूप समान होतें हैं। जैसे-

घर अच्छा है।

घर अच्छे हैं।

यहाँ शून्य प्रत्यय है। इसकी व्युत्पत्ति संस्कृत प्रथमा एकवचन स् (:) से मानी जाती है।

2. एकवचन 'ए' -

आकारांत अविकारी पुल्लिंग का विकारी एकवचन एकारांत होता है। जैसे- घोडा- घोडे ने, घोडे से, घोडे को आदि। यह 'ए' कर्म से लेकर संबोधन तक के सात और सपरसर्ग कर्ता, अर्थात् आठों कारकों का प्रतिनिधित्व करता है। इसकी व्युत्पत्ति के संबंध में विवाद है।

3. बहुवचन 'ए' –

यह आकारांत का अविकारी बहुवचन प्रत्यय है। जैसे- घोडा- घोडे, लडका- लडके आदि। संस्कृत में इसके स्थान पर 'आ:' लग जाता था। जैसे- घोटका:।

'ए' की व्युत्पत्ति विवादास्पद है। हॉर्नले तथा केलाक के अनुसार यह मूलत: एकवचन विकारी 'ए' ही है। उनके अनुसार यह एकवचन का बहुवचन में प्रयोग चल पडा है।

4. बहुवचन 'आँ', 'एं' –

'आँ' का प्रयोग इकारांत तथा ईकारांत, ' ँ ' का इयांत तथा 'एँ' का प्रयोग अन्य स्त्रीलिंग शब्दों के साथ अविकारी बहुवचन में होता है। वस्तुत: 'आँ', ' ँ ', 'एँ' एक ही है। इनका विकास संस्कृत के नपुंसक बहुवचन 'आनि' से हुआ है। इसकी व्यत्पत्ति विवादास्पद नहीं है।

5. बहुवचन 'ओं' –

यह सभी विकारी बहुवचन रूपों में आता है। 'य', 'व' श्रुति के कारण इसका रूप 'यों' या 'वों' भी हो जाता है। इसकी व्युत्पत्ति के संबंध में कोई विवाद नहीं है।

6. बहुवचन 'ओ' –

बहुवचन सम्बोधन में यह (ओ) प्राय: सभी प्रकार के शब्दों के साथ प्रयुक्त होता है। इसकी व्युत्पत्ति के संदर्भ में अधिकांश विद्वानों ने विचार ही नहीं किया है। डॉ. भोलानाथ तिवारी इसकी व्युत्पत्ति का संबंध संस्कृत एकवचन शून्य विभक्ति से मानते हैं।

1.3.3 कारक

कारक/विभक्तियों पर डॉ. माधव सोनटक्के ने अपने ग्रंथ 'प्रयोजनमूलक हिंदी' में काफी विस्तार से विवेचन किया है। यह विवेचन अध्येता एवं छात्रों को अध्ययन-अध्यापन में सहायक सिद्ध होता है।

वाक्य में कारक/विभक्तियों का स्थान महत्त्वपूर्ण होता है। संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से वाक्य के अन्य शब्दों के साथ उनका सम्बन्ध सूचित हो, उसे कारक कहते हैं। 'कारक' शब्द का सामान्य अर्थ है- करनेवाला; अर्थात् लाभकारक, गुणकारक आदि। व्याकरण के अंतर्गत 'कारक' शब्द का अभिप्राय है- क्रिया से सम्बन्ध बतानेवाला तत्त्व। अत: वाक्य में विभिन्न संज्ञा या सर्वनाम

पदों के, क्रिया के साथ अथवा अन्य पदों के साथ सम्बन्ध का बोध करानेवाला तत्त्व 'कारक' कहलाता है। इसी आधार पर 'कारक' की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है–

''संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से यह ज्ञात हो कि वाक्य में उसका क्या स्थान है और वाक्य के अन्य शब्दों से तथा विशेषत: क्रिया से उसका क्या सम्बन्ध है, उसे 'कारक' कहते हैं।''

कारकों के बोध के लिए संज्ञा या सर्वनाम के आगे जो प्रत्यय लगाये जाते हैं, उन्हें व्याकरण में 'विभक्तियाँ' कहते हैं। विभक्तियों से ही कारकों की पहचान होती है। हिंदी कारकों की विभक्तियों के चिह्न इस प्रकार हैं–

विभक्ति	कारक	चिह्न
प्रथमा	कर्ता	0, ने
द्वितीया	कर्म	को
तृतीया	करण	से, के साथ, के द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान	को, के लिए, के वास्ते
पंचमी	अपादान	से (अलग)
षष्ठी	सम्बन्ध	का, की, के, रा, री, रे
सप्तमी	अधिकरण	में, पर, पै
संम्बोधन	सम्बोधन	हे, अरे, अजी

अत: कारकों के आठ रूप या प्रकार सम्भव हैं। इसी आधार पर कारकों के आठ भेद माने जाते हैं। उसका विवेचन इस प्रकार हैं–

1. कर्ता कारक –

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से यह ज्ञात हो कि वह कार्य का करनेवाला है, उसे कर्ता कारक कहते हैं। जैसे–

शिक्षक ने विद्यार्थियों को समझाया।

यहाँ पर 'समझना' क्रिया को करनेवाला 'शिक्षक' है। अत: 'शिक्षक ने' कर्ता कारक है।

प्राय: कर्ता कारक के साथ 'ने' विभक्ति चिह्न का प्रयोग होता है। कभी-कभी 'ने' के बिना शून्य (0) विभक्ति चिह्न से भी कर्ता कारक का बोध होता है। जैसे- शिक्षक विद्यार्थियों को समझा रहे हैं।

विभक्ति लगाने या न लगाने के आधार पर कर्ता कारक के दो रूप होते हैं- (1) प्रत्यय कर्ता कारक और (2) अप्रत्यय कर्ता कारक। तात्पर्य यह है कि जहाँ 'ने' विभक्ति लगती है, वहाँ प्रत्यय कर्ता कारक और जहाँ 'ने' विभक्ति नहीं लगती, वहाँ अप्रत्यय कर्ता कारक होता है।

कर्ता कारक के 'ने' विभक्ति चिह्न का प्रयोग निम्न रूप में भी होता है-

(i) जब क्रिया सकर्मक तथा सामान्य भूतकाल, आसन्न भूतकाल, पूर्ण भूतकाल, संदिग्ध भूतकाल और हेतुहेतुमद भूतकालों के कर्मवाच्य में हो तो 'ने' विभक्ति चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे-

मोहन ने रोटी खायी। (आसन्न भूतकाल)

मोहन ने रोटी खायी थी। (पूर्ण भूतकाल)

मोहन ने रोटी खायी होगी। (संदिग्ध भूतकाल)

मोहन ने पुस्तक पढ़ी होती तो उत्तर ठीक होता। (हेतुहेतुमद भूतकाल)

(ii) जब संयुक्त क्रिया के दो खंड सकर्मक हो तो अपूर्ण भूतकाल को छोडकर अन्य सभी भूतकालों में कर्ता के साथ 'ने' विभक्ति चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे-

राम ने खा लिया।

मोहन ने उत्तर कह दिया।

उक्त दोनों वाक्यों में 'खा लिया' और 'कह दिया' संयुक्त क्रियाएँ हैं। साथ ही इसके दोनों खंड सकर्मक हैं।

(iii) अकर्मक क्रिया में प्राय: 'ने' विभक्ति चिह्न नहीं लगता है। फिर भी कुछ ऐसी अकर्मक क्रियाएँ हैं, जिनमें 'ने' विभक्ति चिह्न का प्रयोग अपवाद रूप में होता है। जैसे-

नहाना, छींकना, खाँसना, थूकना आदि। ऐसी क्रियाओं के बाद कर्म नहीं आता है। जैसे-

उसने नहाया।

राम ने खाँसा।

उसने छींका।

(iv) जब अकर्मक क्रियाएँ सकर्मक बन जाए तो 'ने' विभक्ति चिह्न का प्रयोग होता है, अन्यथा नहीं। जैसे–

राम ने लड़ाई लड़ी।

राम ने टेढ़ी चाल चली।

(v) प्रेरणार्थक क्रियाओं के साथ अपूर्ण भूतकाल को छोडकर शेष सभी भूतकालों में 'ने' विभक्ति चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे–

मैंने उसे पढ़ाया।

उसने एक रूपया दिलवाया।

2. कर्म कारक –

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से यह ज्ञात हो कि उस पर क्रिया का फल पड़ रहा है, उसे कर्म कारक कहते हैं। जैसे–

शिक्षक ने विद्यार्थियों को समझाया।

उक्त वाक्य में 'समझाने' की क्रिया का फल विद्यार्थियों पर पड़ता है। अत: 'विद्यार्थियों को' कर्म कारक है।

कर्म कारक का विभक्ति चिह्न 'को' है, लेकिन कभी–कभी विभक्ति चिह्न के बिना भी कर्म कारक का बोध होता है। जैसे–

कृष्ण ने गीता सुनाई।

उक्त वाक्य में 'गीता' कर्म कारक है; 'सुनने' की क्रिया का फल याने सीधा प्रभाव इस शब्द से स्पष्ट होता है।

कर्ता कारक के समान ही कर्म कारक के भी दो रूप होते हैं– (1) प्रत्यय कर्म कारक और (2) अप्रत्यय कर्म कारक।

जब कर्म कारक निम्न अर्थ सूचित करता है, तब 'को' विभक्ति चिह्न प्रयुक्त होता है– (1) निश्चित कर्म, (2) व्यक्तिवाचक, अधिकारवाचक तथा सम्बन्धवाचक कर्म और (3) मनुष्यवाचक सार्वनामिक कर्म। जैसे–

चोर ने लडके को मारा। (निश्चित कर्म)

राजा ने ब्राह्मण को देखा। हम मोहन को जानते हैं। डाकू गाँव के मुखिया को खोजते थे। (व्यक्ति, अधिकार, सम्बन्धवाचक कर्म)

सिपाही तुमको पकड़ लेगा। (मनुष्यवाचक सार्वनामिक कर्म)

सर्वनाम पदों (जैसे- मैं, तू, वह, हम, आप, उस, उन आदि) का कर्मकारक होने पर किसी स्थिति में तो उनके साथ 'को' विभक्ति चिह्न का प्रयोग होता है, परंतु किसी स्थिति में विभक्ति चिह्न का प्रयोग न होकर उसके स्थान पर 'ए' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। अत: केवल 'आप' सर्वनाम के साथ 'को' विभक्ति चिह्न का प्रयोग अवश्य होता है। तात्पर्य यह है कि विभक्ति चिह्न के बिना सर्वनाम (के, हमें, उसे, तुझे, उन्हें, इसे, इन्हें आदि) के रूपों का प्रयोग होता है। जैसे-

मुझको उसकी तलाश थी।

उक्त वाक्य सही रूप में 'मुझे उनकी तलाश थी' कहा जाता है।

साथ ही यदि कर्म निर्जीव हो तो 'को' विभक्ति चिह्न का प्रयोग नहीं होता है। जैसे-

राम चित्र बनाता है।

सीता पत्थर तोड़ती है।

इसके साथ ही निर्जीव कर्म के साथ प्रयुक्त 'को' विभक्ति चिह्न हो, तो वह दिशासूचक होता है। जैसे-

वह घर को आया।

3. करण कारक –

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से यह ज्ञात होता है कि वह क्रिया का साधन है, अर्थात् उसके द्वारा क्रिया हुई है, हो रही है या होगी; उसे कारण कारक कहते हैं। जैसे-

सब काम अपने हाथ से करो।

उक्त वाक्य में 'हाथ से' करण कारक है, क्योंकि वह कर्म का साधन है। करण कारक का विभक्ति चिह्न 'से' है।

इसके साथ ही करण कारक में 'द्वारा', 'के द्वारा', 'के साथ' विभक्ति चिह्न का भी प्रयोग किया जाता है। जैसे-

तुम तार द्वारा मुझे सूचित करना।

मुझे राम के द्वारा आपका संदेश मिला।

तुम पवन के साथ मेरे घर आ जाना।

यदि करण कारक बहुवचन में हो, तो कभी-कभी 'से' विभक्ति चिह्न का प्रयोग नहीं भी होता है। जैसे-

अब आप खेल का आँखों देखा हाल सुनिए।

अब आप इस काम को अपने हाथों करना चाहते हैं।

4. सम्प्रदान कारक –

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से यह ज्ञात होता है कि क्रिया (कार्य या व्यापार) उसके निमित्त या उसके लिए हुई है या होगी, उसे सम्प्रदान कारक कहते हैं। जैसे-

बच्चे को दूध दे दो।

उक्त वाक्य में क्रिया-व्यापार 'बच्चे' के लिए है। इसलिए 'बच्चे को' सम्प्रदान कारक है। सम्प्रदान का विभक्ति चिह्न 'को' है।

साथ ही सम्प्रदान कारक में 'के लिए', 'के वास्ते', 'की खातिर' आदि विभक्ति चिह्नों का भी प्रयोग होता है। जैसे-

मनोरंजन के लिए सिनेमा जरूरी है।

भिखारी के वास्ते पैसे दे दो।

मुझे उनकी खातिर जाना पड़ेगा।

जहाँ पर एक ही वाक्य में सम्प्रदान कारक में दो संज्ञाएँ आ जाती हैं, वहाँ पर दोनों के बाद 'को-को' या 'के लिए-के लिए' विभक्ति चिह्नों का प्रयोग न करके एक के बाद 'को' तथा दूसरी संज्ञा के बाद 'के लिए' विभक्ति चिह्न का प्रयोग करना अधिक समीचीन होगा। जैसे-

पिताजी ने मुझको पैसे दिए और तुम्हारे लिए मिठाई रखी है।

5. अपादान कारक –

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उसका किसी अन्य वस्तु, व्यक्ति, स्थान आदि से पृथकता या तुलना का बोध हो, उसे अपादान कारक कहते हैं। जैसे-

मजदूर छत से गिर पड़ा।

यह कपड़ा उससे सुन्दर है।

उक्त वाक्यों में 'छत से' और 'उससे' अपादान कारक है; क्योंकि इसमें क्रमश: पृथकता और तुलना का बोध होता है। अपादान कारक का विभक्ति चिह्न 'से' है। अलग होना ही अपादान कारक की विशेषता है।

6. सम्बन्ध कारक –

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उसका वाक्य के अन्य शब्दों के साथ सम्बन्ध स्थापित होने का बोध हो, उसे सम्बन्ध कारक कहते हैं। जैसे–

यह भगवान का घर है।

उक्त वाक्य में भगवान का सम्बन्ध घर से है। अत: 'भगवान का' सम्बन्ध कारक है। यहाँ पर सम्बन्ध कारक का विभक्ति चिह्न 'का' है। इसके अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं–

भगवान की माता अच्छी है।

भगवान के पिताजी अच्छे है।

सर्वनाम पद (आप) को छोड़कर शेष उत्तम पुरुषवाचक सर्वनाम (मैं, हम) और मध्यम पुरुषवाचक सर्वनाम (तू, तुम) सम्बन्धकारक में प्रयुक्त होने पर उनके साथ 'रा', 'री', 'रे' विभक्ति चिह्न जुड़ जाते हैं और उनका रूप भी कुछ बदल जाता है। जैसे–

मेरा घर, मेरे मित्र, मेरी बहन।

हमारा घर, हमारे मित्र, हमारी बहन।

तेरा घर, तेरे मित्र, तेरी बहन।

तुम्हारा घर, तुम्हारे मित्र, तुम्हारी बहन।

7. अधिकरण कारक –

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से यह ज्ञात हो कि वह वाक्य में प्रयुक्त क्रियापद का आश्रय या आधार है, उसे अधिकरण कारक कहते हैं। जैसे–

बच्चे उद्यान में खेल रहे हैं।

मैं छत पर बैठकर पढ़ूँगा।

उक्त पहले वाक्य में खेलने की क्रिया का आधार 'उद्यान' है। अत: क्रिया उद्यान में हो रही है। दूसरे वाक्य में बैठकर पढ़ने की क्रिया 'छत' के आधार पर हो रही है। तात्पर्य यह है कि क्रमश: 'उद्यान में' और 'छत पर' अधिकरण कारक है। अधिकरण कारक के विभक्ति चिह्न 'में', 'पर' है।

अधिकरण कारक में विभक्ति चिह्न प्रयुक्त होने का आधार दो प्रकार का होता है- (1) भीतरी आधार और (2) बाहरी आधार।

भीतरी आधार का विभक्ति चिह्न 'में' है। 'में' विभक्ति चिह्न का प्रयोग भीतरी आधार मोल, मेल, अंतर, कारण, स्थिति, निश्चित काल की स्थिति आदि अर्थों में होता है। जैसे-

दूध में मिठास है। (भीतरी आधार)

यह पुस्तक सौ रूपये में खरीदी। (मोल)

भाई-भाई में प्रीति है। (मेल)

भाई-भाई में अनबन है। (अंतर)

व्यापार में उसे टोटा पड़ा। (कारण)

रोगी होश में नहीं है। (स्थिति)

वह एक घण्टे में अच्छा हुआ। (निश्चित काल की स्थिति)

इसी तरह बाहरी आधार का विभक्ति चिह्न 'पर' है। उसके प्रयोग का बाह्य आधार दूरता, कारण, अधिकता, नियम पालन, अनंतरता, निश्चित काल आदि अर्थों में होता है। जैसे-

नोकरों पर दया करो। (बाह्य आधार)

एक कोस की दूरी पर है। (दूरता)

अच्छे काम पर इनाम मिलता है। (कारण)

दिन-पर-दिन भाव चढ़ रहे हैं। (अधिकता)

लड़के माता-पिता के स्वभाव पर होते हैं। (नियम पालन)

भूख लगने पर ही खाना चाहिए। (अनंतरता)

एक-एक घण्टे पर दवा दी जाए। (निश्चित काल)

अधिकरण कारक के विभक्ति चिह्न 'में', 'पर' के स्थान पर कभी-कभी 'के भीतर', 'के बीच', 'के मध्य', 'तक' आदि विभक्ति चिह्नों का भी प्रयोग किया जाता है। जैसे-

घर के भीतर छिपने से काम नहीं चलेगा।

वह भीड़ के बीच पहुँचकर चिल्लाया।

नदी के मध्य जाकर नौका डगमगाने लगी।

उन्होंने कन्याकुमारी से नंदादेवी तक यात्रा की।

8. सम्बोधन कारक –

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से बुलाने, पुकारने, संकेत करने या आश्चर्य भाव व्यक्त करने, प्रकट करने आदि का बोध हो, उसे सम्बोधन कारक कहते हैं। जैसे–

ए मोहन! कहाँ जा रहे हो?

हे भगवान! यह कैसा अन्याय है?

ओ लड़के! जरा इधर तो आओ।

अरे भाई! मेरी पूरी बात सुन लो।

अरे रे! बेचारा मर गया।

अहा, हा! कितना सुन्दर दृश्य है!

आह! यह क्या हुआ?

अजी! सुनते हो या नहीं?

सम्बोधन कारक का विभक्ति चिह्न 'ए', 'हे', 'ओ', 'अरे', 'अरे रे', 'अहा हा', 'आह', 'अजी' आदि है।

सम्बोधन कारक के साथ आगे या पीछे बहुधा विस्मयादिबोधक चिह्न आता है। कभी–कभी बिना विभक्ति चिह्न के भी सम्बोधन कारक का बोध हो सकता है। जैसे–

मोहन! कहाँ जा रहे हो?

भगवान! क्षमा करो!

लड़के! पहले मेरी बात तो सुन!

भाई! पहले मेरी पूरी बात तो सुनो।

उपर्युक्त कारकों के विवेचन के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि कुछ लोग सम्बोधन कारक और सम्बन्ध कारक को कारक नहीं मानते हैं। उनका मानना है कि सम्बोधन कारक का सम्बन्ध

क्रिया अथवा किसी दूसरे शब्द से नहीं होता है। साथ ही यही स्थिति वे सम्बन्ध कारक की भी मानते हैं। इसलिए वे सम्बोधन कारक और सम्बन्ध कारक को छोड़कर अन्य शेष छः को ही कारक मानते हैं। इस तरह कारक और उनके विभक्ति चिह्नों के भेदादि को लेकर विचार किया जा सकता है। आगे चलकर अनुसंधान के जरिए मांग की पूर्ति की संभावना की जा सकती है।

1.3.4 विराम चिह्न

अंग्रेजी भाषा के व्याकरण में विराम चिह्नों का विशेष रूप से विवेचन किया गया है। अंग्रेजी ढंग के अनुसार ही हिन्दी में भी इसका प्रचार बढ़ गया है। वस्तुतः वाक्य में विराम और उनके चिह्न विशेष महत्त्व रखते हैं। शब्दों और वाक्यों का परस्पर सम्बन्ध बताने के लिए, उसी तरह किसी विषय को भिन्न-भिन्न विभागों में विभाजित करने के लिए तथा पढ़ने में ठहराव के लिए लिखित रूप में जिन चिह्नों का उपयोग किया जाता है, उन्हें विराम चिह्न कहा जाता है।

विराम चिह्न और उनके प्रयोगों एवं प्रकारों का डॉ. अरविन्द कुमार ने 'सम्पूर्ण हिन्दी व्याकरण और रचना' में विस्तार से विवेचन किया है। उसके जरिए विराम चिह्नों पर प्रकाश डालने में सहायता मिलती है। साथ ही कुछ चिह्नों को नये रूप में भी अवगत किया जा सकता है। 'विराम' का अर्थ है- विश्राम या ठहराव। जब हम भाषा द्वारा अपने भावों को प्रकट करते हैं, तब एक विचार या उसके कुछ अंश को व्यक्त करने के पश्चात् थोड़ा रूकते हैं, उसे ही विराम कहते हैं। साथ ही उसे और स्पष्ट करने के लिए जिन चिह्नों का प्रयोग किया जाता है, वे ही भाषा में विराम चिह्न कहलाते हैं।

विराम चिह्नों के गलत प्रयोग से अर्थ का अनर्थ हो जाता है, यानी अर्थ बदल जाता है। इसलिए इन चिह्नों का प्रयोग सावधानी से करना पडता है। भाव की पूर्णता के स्तर के ही अनुकूल, अनुरूप विराम का काल भी होता है। लिखने में इन विरामों का काल-भेद चिह्न-विशेषों से सूचित किया जाता है। श्रोताओं तथा पाठकों को इन विराम के विभिन्न स्तरों से पता चल जाता है कि वक्ता या लेखक कहाँ तक के कथन को अपने अभिप्राय द्वारा बताना चाहता है। विराम चिह्न न सिर्फ ठहराव को ही सूचित करते हैं, बल्कि किसी वाक्य के पदों, वाक्यांशों तथा खंड़ वाक्यों के बीच प्रयुक्त होकर विभिन्न भावों को भी संम्प्रेषित करते हैं। अतः विराम चिह्न निःसन्देह अपना विशेष स्थान रखते हैं।

हिंदी भाषा में प्रयुक्त विराम चिह्नों पर डॉ. माधव सोनटक्के ने 'प्रयोजनमूलक हिन्दी' में तथा डॉ. अरविन्द कुमार ने 'सम्पूर्ण हिन्दी व्याकरण और रचना' में आवश्यक विवेचन किया है। उसके

जरिए विराम चिह्नों पर कुछ प्रकाश डाला जा सकता है। डॉ. सोनटक्के जी प्रचलित तथा नये विराम चिह्नों पर विचार करते हैं। इसी तरह डॉ. अरविन्द कुमार तो प्रचलित विराम चिह्नों के साथ-साथ अद्यतन विराम चिह्नों को भी स्पष्ट करते हैं।

प्रस्तुत विवेचन में निम्नलिखित विराम चिह्नों पर विचार किया जा सकता है-

1.	पूर्ण विराम	(।)
2.	अपूर्ण विराम या उपविराम	(:)
3.	अद्र्ध विराम	(;)
4.	अल्प विराम	(,)
5.	प्रश्नबोधक या प्रश्नवाचक चिह्न	(?)
6.	विस्मयादिबोधक चिह्न	(!)
7.	निर्देशक चिह्न	(—)
8.	कोष्ठक चिह्न	(())
9.	उद्धरण चिह्न/अवतरण चिह्न	(‘ ’ “ ”)
10.	योजक चिह्न	(-)
11.	लाघव चिह्न	(o)
12.	विवरण चिह्न	(:-)
13.	लोप चिह्न	(....., xxxx)
14.	त्रुटि चिह्न / काकपद / हंसपद	(ʌ)
15.	अनुवृत्ति चिह्न	(,,)
16.	समाप्ति सूचक चिह्न	(-o-)

1. पूर्ण विराम-(।) (Full Stop)

पूर्ण विराम का अर्थ है- ठहराव। जहाँ विचार की गति एकदम रूक जाय, वहाँ पूर्ण विराम का प्रयोग किया जाता है। वस्तुत: वाक्य के अन्त में पूर्ण विराम का प्रयोग किया जाता है। अतएव प्रत्येक वाक्य की समाप्ति पर इस चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

वह लड़की सुन्दर है।

हमें पर्यावरण को नष्ट होने से बचाना चाहिए।

2. अपूर्ण विराम या उपविराम–(:) (Colon)

एक वाक्य के समाप्त हो जाने पर भी विवक्षित भाव समाप्त नहीं होता है। आगे की जिज्ञासा बनी रहती है। पूर्ण विराम से कम देर तक ठहरते हुए आगे तब तक बढ़ते जाते हैं, जब तक वक्तव्य पूरा नहीं होता है। उस जगह पर अपूर्ण विराम का प्रयोग देखा जाता है।

I) अपूर्ण विराम का प्रयोग संवाद–लेखन, एकांकिका–लेखन, नाटक–लेखन आदि में वक्ता (पात्र/पात्रा) के नाम के बाद किया जाता है। जैसे–

विजय : दीदी, आपका क्या लक्ष्य है?

विजया : मैं शिक्षक बनना चाहती हूँ।

II) साथ ही भावों में एक–दूसरे से सम्बन्धित वाक्यों को अलग करने के लिए भी अपूर्ण विराम का प्रयोग किया जाता है। जैसे–

मेरे पास एक आदेश है : तेरा स्थानांतरण हुआ है।

3. अद्‌र्ध विराम–(;) (Semi-Colon)

जहाँ अपूर्ण विराम से भी कम ठहराव का संकेत होता है, वहाँ अद्‌र्ध विराम चिह्न का प्रयोग होता है।

I) एक वाक्य या वाक्यांश के साथ दूसरे वाक्य या वाक्यांश का दूर का सम्बन्ध बतलाने के लिए अद्‌र्ध विराम का प्रयोग होता है। जैसे–

यह कलम सस्ती है; वह अधिक दिनों तक नहीं चलेगी।

हमने देखा है कि जिन्दगी का रास्ता कितना लम्बा और कठिन है; यह देखा कि हर कदम पर कठिनाई कम होने के बजाय और बढ़ती ही जाती है; यह भी कि परिस्थितियों से ऊबकर मौत को गले लगा लेते हैं।

II) यदि खंड़ वाक्य का आरंभ वरन्, पर, परन्तु, किन्तु, क्योंकि, इसलिए, तो भी आदि शब्दों से हो तो उसके पहले अद्‌र्ध विराम का प्रयोग करना चाहिए। जैसे–

छपरा गाँव के लोगों की आँखें डबड़बाई हुई हैं; क्योंकि अभी–अभी पता चला कि देवा परलोक सिधार गए।

III) सभी तरह की उपाधियों के लेखन में अद्‌र्थ विराम का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

एम्. ए. ; एम्. फिल.; पीएच्.डी.; एल.एल.बी. आदि।

IV) इसके साथ ही लगातार आनेवाले पदबन्धों के बीच भी अद्‌र्ध विराम का प्रयोग किया जाता है।

4. अल्प विराम-(,) (Comma)

अल्प विराम का क्षेत्र बड़ा व्यापक होता है। अल्प विराम का अर्थ है- थोड़े समय के लिए ठहरना। अपनी मनोदशा के अनुसार अपने विचारों में अल्प ठहराव आता है। ऐसे ठहराव के लिए ही अल्प विराम का प्रयोग किया जाता है। इस चिह्न का प्रयोग निम्नलिखित रूप में किया जाता है-

I) जहाँ एक प्रकार के अनेक शब्द या शब्द समूह आये और योजक (और, तथा, एवं, आदि) का प्रयोग केवल अन्तिम दो के बीच आये, तो वहाँ शेष दो के बीच अल्प विराम आता है। जैसे-

दशरथ के चार लड़के थे- राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न।

चारों भाई सुन्दर, सुशील, नम्र और सबल थे।

II) हाँ, नहीं, जी, बस, अत: अतएव, निष्कर्षत:, अच्छा, वस्तुत: सचमुच आदि से शुरू होनेवाले वाक्यों में इन शब्दों के बाद अल्प विराम आता है। जैसे-

जी हाँ, मैंने बार-बार सावधान किया था उसे।

अच्छा, अवश्य जाऊँगा।

बस, इतने से काम चला जाएगा।

III) दी गई संज्ञा के विषय में विशेष सूचना के रूप में आनेवाली संज्ञा या सर्वनाम के पहले और बाद में अल्प विराम आता है। जैसे-

रावण, लंका का राजा, बड़ा ही विद्‌वान था।

बगदाद, इराक की राजधानी, बहुत ही सुन्दर महानगर है।

IV) संबोधित संज्ञा के बाद अल्प विराम आता है। जैसे-

मोहन, जरा इधर तो आइए।

प्रिय महोदय, मैं आपका ध्यान इस घटना की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ।

V) जिस वाक्य में 'वह'. 'यह', 'तब', 'या', 'अब' आदि लुप्त हो, वहाँ अल्प विराम का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

तुम जो कहते हो, ठीक नहीं है।

जब जाना ही है, चले जाओ।

उक्त वाक्यों में क्रमश: 'वह', 'तब' लुप्त है।

VI) वाक्य में यदि कोई वाक्य खंड़ अथवा अन्वर्वर्ती पद्यांश आ जाए, तो वहाँ अल्प विराम का प्रयोग करना चाहिए। जैसे-

क्रोध, चाहे जैसा भी हो, मनुष्य को नष्ट कर देता है।

काकी, जिसके विषय में मैं बात कर रहा था, बहुत ही अच्छा गाती है।

VII) यदि कोई वाक्य प्रत्यक्ष कथन में हो, तो मुख्य कथन के पहले अल्प विराम आता है। जैसे-

वैज्ञानिकों का कहना है, ''पानी अमृत है। इसे बर्बाद मत करो।''

5. प्रश्नबोधक या प्रश्नवाचक चिह्न-(?) (Question Mark or Sign of Interrogation)

वाक्य कें अंत में प्रश्न का बोध करानेवाले प्रश्नबोधक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। वह इस प्रकार हैह्न

I) 'कौन', 'क्या', 'कब', 'कहाँ', 'कैसे', 'क्यों', 'किसलिए' आदि का प्रयोग वाक्य में रहने पर यदि प्रश्न का भाव व्यंजित हो, तो वाक्य के अंत में प्रश्नबोधक चिह्न का प्रयोग किया जाएगा। जैसे-

वह कौन थी?

वह क्या करती थी?

वह कब तक आएगी?

वह क्यों नहीं मानती?

मेरे पास किसलिए आए हो?

मुझसे कैसे गलती हुई?

शायद आप मुम्बई के रहनेवाले हैं?

II) साथ ही यह बात ध्यान रहे कि यदि प्रश्न का भाव व्यंजित नहीं हो तो प्रश्नवाचक चिह्न नहीं आएगा। जैसे-

मैं क्या बताऊँ, श्रीमान! वह कब और कहाँ जाता है, समझ नहीं पा रहा हूँ।

6. विस्मयादिबोधक चिह्न (!) (Exclamation Mark)

करूणा, भय, हर्ष, विषाद, प्रेम, घृणा, आश्चर्य आदि भावों को प्रकट या व्यक्त करने के लिए विस्मयादिबोधक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। इस चिह्न का प्रयोग निम्नलिखित स्थितियों में होता हैं -

I) अपनों से छोटों के प्रति सद्भावनाएँ, शुभकामनाएँ आदि व्यक्त करने के लिए विस्मयादिबोधक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

तुम चिरंजीवी हो! भगवान तुम्हारा भला करे!

II) आल्हाद सूचक शब्दों, पदों एवं वाक्यों के अंत में विस्मयादिबोधक चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे-

वाह! तुम धन्य हो!

III) मन की प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए विस्मयादिबोधक चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे-

वाह! वाह! कितना सुंदर नृत्य किया तुमने!

7. निर्देशक चिह्न-(ह्न) (Dash)

निर्देशक चिह्न का प्रयोग निम्नलिखित रूप में किया जाता हैं-

I) समानाधिकरण शब्दों, वाक्यांशों तथा वाक्यों के बीच निर्देशक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

प्रात:काल के सौंदर्य में नित्य नयापन-नूतनत्व दिखाई देता है।

छोटी-सी भूल के कारण आपका जीवन बिगड गया-नष्ट हो चुका।

II) किसी विषय के साथ उसके संबंध में अन्य सूचना देने के लिए निर्देशक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

कुछ साल पहले काँग्रेस के दो दल निर्माण हुए- एक चव्हाण काँग्रेस, दूसरा इंदिरा-काँग्रेस।

इंग्लैंड में राजनीतिज्ञों के दो दल हैं- एक उदार, दूसरा अनुदार।

III) किसी वाक्य को उद्धृत करते समय उस वाक्य के पहले निर्देशक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

स्वामी विवेकानंद कहते थे- ''ज्ञान ही शक्ति है।''

अपने मीठे स्वरों के साथ वह गलियों में धूमता हुआ कहता- ''बच्चों को बहलाने वाला, खिलौनेवाला।''

IV) किसी वाक्य या लेख के अंत में उसके लेखक का नाम लिखने के पूर्व निर्देशक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

'ज्ञान ही शक्ति है' - स्वामी विवेकानंद।

'ज्ञान, विज्ञान और सुसंस्कार के लिए शिक्षा प्रसार' - डॉ. बापूजी सालुंखे।

V) बातचीत करते समय रूकावट सूचित करने के लिए निर्देशक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

मैं - अब - सोच - नहीं - सकता।

मैं - अब - जा - नहीं - सकता।

VI) ऐसे शब्द या उपवाक्य के पूर्व जिस पर अवधारण की आवश्यकता होती है, तब निर्देशक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

फिर क्या था- सिर पर एक के बाद एक लाठियाँ गिरने लगी।

पुस्तक का नाम है- गोदान।

VII) किसी वाक्य में भाव का अचानक परिवर्तन हो जाने पर निर्देशक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

सबका सांत्वन करना, इकट्ठा करना, समझना, और- न जाने क्या क्या?

8. कोष्ठक चिह्न- (Bracket) ( ), [ ], { }

निम्नलिखित स्थानों पर कोष्ठक चिह्न का प्रयोग किया जाता हैं-

I) विषय-विभाजन करते समय क्रमसूचक अक्षरों का या अंकों का उपयोग किया जाता है, तब कोष्ठक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

संकलन में तीन बातें महत्त्व रखती हैं- (अ) स्थल (ब) काल और (क) कृति।

अलंकारों के प्रमुख प्रकार ये हैं- (1) शब्दालंकार (2) अर्थालंकार (3) उभयालंकार।

II) समानार्थी शब्द या वाक्यांश में इस कोष्ठक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

हमारे कॉलेज में एक लोकप्रिय नेता (भूतपूर्व मंत्री) का लड़का पढ़ता है।

III) नाटक, एकांकी आदि के संवाद, भय लेखों में हावभाव तथा अन्य रंगमंचीय सूचना देने के लिए इस कोष्ठक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

विजय-अंजली- (जाते-जाते मुड़कर क्रोध से)

चुप रहो श्रीपत! तुम चाहते हो, मेरा बेटा भी तुम्हारी तरह आवारा हो जाय! [अंजो दीदी नाटक में - अश्क-)]

IV) भूल सुधारने तथा त्रुटि की पूर्ति के लिए वर्गाकार कोष्ठक [ ] इस चिह्न का प्रयोग किया जाता है।

V) इसके साथ ही अलग पंक्तियों में लिखे हुए शब्दों को मिलाने के लिए { } इस चिह्न का प्रयोग किया जाता है।

9. उद्धरण चिह्न/अवतरण चिह्न-(Inverted Comma) (‘ ’ “ ”)

उद्धरण चिह्न या अवतरण चिह्न के दो रूप होते हैं- (1) इकहरा उद्धरण चिह्न और (2) दुहरा उद्धरण चिह्न।

I) कोई विशेष पद, वाक्य खंड उद्धृत करने के लिए इकहरे उद्धरण चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

बच्चे माता को ‘मा’, पानी को ‘पा’ दूध को ‘दुदु’ कहते हैं।

II) लेखक या कवि का उपनाम, लेख का शीर्षक, पुस्तक का नाम, समाचार पत्र का नाम आदि उद्धृत करते समय इकहरे उद्धरण चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

कोल्हापूर से ‘पुढारी’ नामक समाचार पत्र प्रकाशित होता है।

प्रेमचंद उर्दू में ‘नवाबराय’ उपनाम से लिखते थे।

मुम्बई में ‘शासकीय गृह’ नामक अच्छा विश्रांति गृह है।

III) इसी तरह व्याकरण, अलंकार, तर्क आदि साहित्यिक विषयादि उदाहरण देते समय दुहरे उद्धरण चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

''कनक कनक ते सौगुनी मादकता व्है जात।''

''चारू चंद्र की चंचल किरणें

''खेल रही थीं जल-थल में।''

''महाराज वापस आए होंगे।''

IV) किसी महत्त्वपूर्ण वचन उद्धृत करते समय या उसी तरह की कहावतों को उद्धृत करते समय दुहरे उद्धरण चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

''घट-घट में साई रमता, ताके कटुवचन मत बोल रे।''

10. योजक चिह्न-(Hyphen) (-)

हिंदी भाषा की प्रकृति विश्लेषणात्मक है। इसी कारण इसमें योजक चिह्नों की जरूरत पड़ती है। वस्तुत: योजक चिह्न वाक्य में प्रयुक्त शब्द के अर्थ को स्पष्ट करते हैं। योजक चिह्न से शब्दोच्चारण तथा वर्तनी में स्पष्टता आती है और हम अर्थ-भेद से भी बचते हैं। इसलिए निम्नलिखित रूप में योजक चिह्नों का प्रयोग किया जा सकता है-

I) दो विपरीतार्थक शब्दों के बीच योजक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे- माता-पिता, रात-दिन, क्रय-विक्रय, आदान-प्रदान आदि।

II) जिन पदों के दोनों खंड प्रधान हों और जिनसे 'और' लुप्त हो वहाँ योजक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे- दाल-भात, लोटा-डोरी, लड़का-लड़की, माता-पिता आदि।

III) एकार्थबोधक सहचर शब्दों अर्थात् जिनके अर्थ समान होते हैं, उन शब्दों के बीच योजक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे- नपा-तुला, समझ-बूझ, दीन-दु:खी, चाल-चलन, जी-जान, हँसी-खुशी आदि।

IV) जब दो संयुक्त क्रियाएँ एक साथ प्रयुक्त हो, तो उनके बीच योजक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे- पढ़ना-लिखना, उठना-बैठना, खाना-पीना, मारना-पीटना आदि।

V) यदि दो विशेष पदों का संज्ञा के अर्थ में प्रयोग हो, तो योजक चिह्न का प्रयोग किया जात है। जैसे- लूला-लंगड़ा, अन्धा-बहरा, भूखा-प्यासा आदि।

VI) दो प्रेरणार्थक क्रियाओं के बीच योजक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे- कराना-करवाना, चलना-चलवाना, जितना-जितवाना आदि।

VII) अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण के जब दो पद एक साथ आते हैं, तब उनके बीच योजक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे- बहुत-सी राशि, बहुत-सा धन, कम-से-कम, बहुत-सी बातें आदि।

VIII) यदि एक ही संज्ञा दो बार प्रयुक्त हो, तो उनके बीच योजक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे- राम-राम, गली-गली, बूँद-बूँद, कोना-कोना आदि।

IX) जब दो शब्दों के बीच संबंध कारक चिह्न (का, की, के) लुप्त हो, तो दोनों के बीच योजक चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे- राम-नाम, कृष्ण-लीला, रावण-वध, प्रकाश-स्तंभ, शब्द-सागर, ज्ञान-गंगा आदि।

11. लाघव चिह्न-(Short Sign) (o)

लघु से लाघव बनता है। किसी प्रचलित बडे शब्द के छोटे रूप को अर्थात् प्रथम अक्षर को दर्शाने के लिए लाघव चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

पं॰ जवाहरलाल नेहरू भारत के प्रथम प्रधानमंत्री थे।

डॉ॰ विजय मोहन अस्थिरोग के ख्यातनाम चिकित्सक हैं।

12. विवरण चिह्न- (Colon) (:-)

किसी पद की व्याख्या करने या किसी के बारे में कुछ विस्तार से कहने के लिए विवरण चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

समास :- कई पदों को मिलाकर एक हो जाने को समास कहते हैं।

पद :- वाक्यों में प्रयुक्त शब्द अर्थवाची बनकर पद बन जाते हैं।

विषय :- दो दिन की छुट्टी के बारे में।

13. लोप चिह्न- (....., xxxx)

लोप चिह्न का प्रयोग कई उद्देश्यों से निम्नलिखित रूप में किया जाता हैंह्न

I) वाक्य में छोडे गए अंश के लिए लोप चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

अरे! अभी तक तुम .....।

यदि आप बुरा न माने तो .....।

II) गोपनीय या अश्लील पदों को छुपाने के लिए लोप चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

पुलिस ने उसे माँ-बहन संबंधी गाली देते हुए कहा.....।

III) रिक्त स्थान दिखाने के लिए लोप चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

जिसका आदि होता है, उसका ..... भी निश्चित है।

IV) वाक्यांश में कुछ पंक्तियाँ छोडे जाने का संकेत देने के लिए लोप चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

हाय! मृत्यु का ऐसा अमर अपार्थिव पूजन।

x x x x

x x x x

नग्न क्षुधातुर वास विहीन रहें जीवित जन।।

14. त्रुटि चिह्न/काकपद/हंसपद-(ʌ)

वाक्य में किसी पद या वाक्य के छूट जाने पर उस स्थान पर ही त्रुटि चिह्न का प्रयोग कर ठीक उसके ऊपर छूटे अंश को लिखा जाता है। जैसे-

रामू रात के ʌ 9 बजे घर आता है।

उसे अब तक ʌ घर आना था।

15. अनुवृत्ति चिह्न-(,,)

जब लिखने में एक ही शब्द बार-बार ठीक नीचे लिखना पडता है, तब अनुवृत्ति चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे-

आचार्य रामचंद्र शुक्ल।

'' हजारी प्रसाद द्विवेदी।

'' पंडितराज जगन्नाथ।

'' कुलपति मिश्र।

16. समाप्ति सूचक चिह्न-(——०——)

लेख या पुस्तक के अंत में समाप्ति सूचक चिह्न का प्रयोग किया जाता है।

1.3.5 वाक्य के प्रकार

अर्थ-बोध के स्तर पर भाषा की मूल इकाई 'शब्द' है। भाव-बोध तथा विचार-बोध के स्तर पर 'वाक्य' को भाषा की इकाई माना जा सकता है। प्रत्येक शब्द में अलग अर्थ-बोध की सामर्थ्य होता है। मात्र शब्दों को लिखने या बोलने से हमारे भाव या विचार व्यक्त नहीं हो सकते हैं। शब्दों को एक व्यवस्थित क्रम में रखकर अर्थात् लिंग, वचन, परसर्ग आदि की व्याकरण सम्मत रचना करने पर ही वाक्य बनता है। उससे हमारे भाव, विचार व्यक्त होते हैं। उसे अर्थपूर्णत्व प्राप्त होता है।

वाक्य की परिभाषाएँ –

वाक्य की विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न परिभाषाएँ दी हैं। उनमें से कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार हैं-

डॉ. भोलानाथ तिवारी –

वह अर्थवान ध्वनि समुदाय, जो पूरी बात या भाव की तुलना में अपूर्ण होते हुए भी अपने आप में पूर्ण हो तथा जिसमें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से क्रिया का भाव हो, वह वाक्य कहलाता है।

डॉ. भगीरथ मिश्र –

वाक्य वह शब्द समूह है, जिसके माध्यम से लिखकर अथवा बोलकर उसके भावों और विचारों को स्पष्टीकरण के साथ ही पाठक या श्रोता को उसके अर्थ का ज्ञान कराया जाए।

आचार्य देवेंद्रनाथ शर्मा –

भाषा की न्यूनतम् पूर्ण सार्थक इकाई वाक्य है।

दो या दो से अधिक अर्थपूर्ण शब्दों के क्रमबद्ध रचना-समूह को वाक्य कहा जाता है। शब्द जब वाक्य में आ जाता है, तब वह पद बनता है। इन पदों का निश्चित क्रम होता है। इसे ही वाक्य-रचना या पदक्रम कहते हैं। यह बात ध्यान रखना कि प्रत्येक भाषा में वाक्य-रचना अलग-अलग ढंग से की जाती है। मराठी, कन्नड तथा हिंदी वाक्यों की रचना समान-सी लगती है। अंग्रेजी तथा संस्कृत वाक्यों में अलग-अलग रचना दिखाई देती है।

वस्तुत: हिंदी की वाक्य-रचना निश्चित है। उसमें प्रथम कर्ता, उसके बाद कर्म और अंत में क्रिया ऐसा ही क्रम रहता है। यह पदक्रम व्याकरणीय या साधारण पदक्रम कहलाता है।

वाक्य के प्रकार –

जिस अर्थपूर्ण शब्द-समूह द्वारा कोई एक विचार पूर्ण रूप से प्रगट हो जाता है, वह शब्द-समूह वाक्य कहलाता है।

रूप तथा रचना की दृष्टि से वाक्य के तीन प्रकार किए जाते हैं- साधारण या सामान्य वाक्य, संयुक्त वाक्य और मिश्र वाक्य।

1. साधारण वाक्य –

जिस वाक्य में एक ही उद्देश्य और एक ही विधेय रहता है, उस वाक्य को साधारण वाक्य कहते हैं। जैसे-

महात्मा गांधी अहिंसा के पुजारी थे।

माता-पिता पार्क में बैठे हैं।

2. संयुक्त वाक्य –

जिस वाक्य में एक से अधिक (मिश्र या साधारण वाक्य) वाक्य स्वतंत्र रूप में एक-दूसरे के साथ किसी संयोजक से जोडे जाते हैं, उसे संयुक्त वाक्य कहते हैं। संयुक्त वाक्य में दोनों वाक्य जो जुडे होते हैं, स्वतंत्र होते हैं; वे किसी पर आश्रित नहीं होते है। जैसे-

मनोज कल आया था, लेकिन रूका नहीं।

मेरे पिताजी कश्मीर गए और वहाँ दस दिन रहें।

3. मिश्र वाक्य –

जिस वाक्य में एक प्रधान वाक्य और एक अथवा अधिक आश्रित उपवाक्य आ जाते हैं, उसे मिश्र वाक्य कहते हैं। जैसे-

मैं देखता हूँ कि तुम मेहनत नहीं करते हो।

ऐसा कौन है कि जिसने गांधी जी का नाम सुना नहीं।

सूरज उगा, इसलिए अँधेरा भागा।

अर्थ के आधार पर वाक्य के आठ प्रकार किए जाते हैं। वे इस प्रकार हैं-

1. विधानार्थक या विधिवाचक वाक्य –

यदि वाक्य में कार्य के होने या करने का सामान्य कथन हो, निषेधात्मक नहीं तो उसे विधानार्थक या विधिवाचक वाक्य कहा जाता है। जैसे–

विजयनगर में राजा कृष्णदेव राय रहते थे।

राम आम खाता है।

जाडे की धूप बहुत प्यारी लगती है।

हमारा भारत एक महान देश है।

2. निषेधार्थक या निषेधवाचक वाक्य –

यदि वाक्य में कार्य के न होने या न करने का बोध हो तो उसे निषेधार्थक या निषेधवाचक वाक्य कहा जाता है। जैसे–

पिताजी स्वस्थ नहीं है।

राम आम नहीं खाता है।

वह घर नहीं जाएगा।

भारत से बढ़कर दूसरा कोई देश नहीं है।

3. प्रश्नार्थक या प्रश्नवाचक वाक्य –

यदि वाक्य में कोई प्रश्न किया जाय, तो वह प्रश्नार्थक या प्रश्नवाचक वाक्य कहलाता है। इस तरह के वाक्यों में 'क्या', 'कौन', 'कहाँ', 'कैसें', 'कब', 'क्यों', 'किसलिए' आदि का प्रयोग होता है। प्राय: वाक्य के आरंभ में 'क्या' रखकर विधानार्थक से प्रश्नार्थक वाक्य बनाया जाता है। वस्तुत: 'क्या' का प्रयोग (निर्जीव के लिए), 'कौन' का प्रयोग (सजीव के लिए), 'कहाँ' का प्रयोग (स्थान के बारे में), 'कब' का प्रयोग (समय-संबंधी प्रश्न के लिए), 'कैसे' का प्रयोग (स्थिति या अवस्था से संबंधित प्रश्न के लिए) साथ ही 'कैसे' का प्रयोग (मार्ग, साधन या कारण के लिए), 'क्यों' और 'किसलिए' का प्रयोग (कारण-संबंधी प्रश्नों के लिए) आदि विविध रूपों में प्रयुक्त होता है। जैसे–

क्या राजा नगए में आए?

कौन आया है?

आप कहाँ जा रहे हैं?

वह कब जा रहा है?

आपके पिताजी कैसे है?

आप कैसे आए?

आप क्यों चिल्ला रहे हैं?

आप किसलिए वहाँ जाया करते हैं?

4. आज्ञार्थक या आज्ञावाचक वाक्य –

यदि वाक्य में वक्ता का उद्देश्य आज्ञा या अनुमति देना है, तो उसे आज्ञार्थक या आज्ञावाचक वाक्य कहते हैं। जैसे–

आओ, भारत भ्रमण कर आओ।

आप अपनी बात कह सकते हैं।

तुम जाओ, अपना काम करो।

5. विस्मयादिबोधक या विस्मयवाचक वाक्य –

यदि वाक्य में विस्मय, हर्ष, शोक, खुशी, घृणा आदि का भाव अभिव्यक्त हो, तो उसे विस्मयादिबोधक या विस्मयवाचक वाक्य कहते हैं। जैसे–

अरे! आप ने तो कमाल ही कर दिया।

अहा! कितना सुंदर दृश्य है।

वाह! तुम बडे बहाद्दूर हो।

6. इच्छार्थक या इच्छावाचक वाक्य –

यदि वाक्य में वक्त की इच्छा, आशा, शुभकामना या शाप आदि अभिव्यक्त हो, तो उसे इच्छार्थक या इच्छावाचक वाक्य कहते हैं। जैसे–

भगवान तुम्हें सुखी रखें।

पिताजी आ जाएँ तो अच्छा हो।

जा, तुझे नरक में भी जगह न मिले।

आपकी यात्रा मंगलमय हो।

7. संदेहार्थक या संदेहवाचक वाक्य –

जिस वाक्य से संदेह या संभावना का बोध हो, उसे संदेहार्थक या संदेहवाचक वाक्य कहते हैं। जैसे–

शायद बरसात आयी होगी।

राम ने आम खाया होगा।

अब तक वह सो गया होगा।

लगता है, मैंने इस आदमी को कहीं देखा है।

8. संकेतार्थक या संकेतवाचक वाक्य –

यदि वाक्य में एक क्रिया का होना दूसरे पर निर्भर करे अथवा एक कार्य का संकेत दूसरे कार्य से मिले, तो उसे संकेतार्थक या संकेतवाचक वाक्य कहते हैं। जैसे–

यदि वर्षा अच्छी हो तो फसल भी अच्छी होगी।

अगर बरसात आती तो बीज बोया जाता।

महाराज नगर में आते तो अच्छा होता।

1.3.6 मानक वर्तनी

देवनागरी लिपि की त्रुटियों के निराकरण के संदर्भ में अनेक प्रयास हुए। इस संदर्भ में महादेव गोविंद रानडे द्वारा गठित लिपि सुधार समिति, काका कालेलकर की अध्यक्षता में गठित सुधार समिति, आचार्य नरेंद्र देव की अध्यक्षता में गठित परिषद, डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में गठित परिषद आदि सुधार समितियों ने देवनागरी को मानक रूप प्रदान करने के लिए अनेक सुझाव दिए। उनमें से व्यवहार्य सुझावों को अपनाया गया। इसी तरह का प्रयास भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा सन् 1961 में नियुक्त एक विशेषज्ञ समिति द्वारा भी हुआ। उनकी सिफारिशें सरकार द्वारा अप्रैल 1962 में स्वीकृत हुई। इसमें हिंदी वर्तनी में एकरूपता लाने तथा लिपि संबंधी कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास किया गया। फलत: वर्तनी संबंधी बने अद्यतन नियमों पर विचार किया जाएगा।

'वर्तनी' को उर्दू में 'हिज्जे' और अंग्रेजी में 'Spelling' कहा जाता है। वस्तुत: 'वर्तनी' शब्द संस्कृत भाषा का है। जिसका अर्थ है– शब्द के वर्ण, उनका क्रम तथा उच्चारण विधि। तात्पर्य यह है कि लिखने की रीति को वर्तनी या अक्षरी कहा जा सकता है। दूसरे शब्दों में, जिस शब्द में जितने

वर्ण या अक्षर जिस अनुक्रम में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें उसी क्रम में लिखना ही 'वर्तनी' कहलाया जाता है।

संसार की किसी भी भाषा की समस्त ध्वनियों के सही उच्चारण के लिए उनकी वर्तनी में एकरूपता का होना आवश्यक होता है। वर्तनी की विविधता के कारण किसी भी भाषा के लेखन में कई प्रकार की उलझने पैदा होती हैं। वर्तनी की शुद्धता या अशुद्धता दो बातों पर निर्भर करती हैंह्न (1) उच्चारण और (2) अध्ययन या अभ्यास।

हिंदी वर्तनी की अनेकरूपता और उसमें उत्पन्न दोषों के निराकरण के लिए भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने विशेषज्ञ-समिति द्वारा सार्थक प्रयास कर हिंदी भाषा की वर्तनी-संबंधी मानक नियम निर्धारित किए। वे नियम इस प्रकार हैंह्न

1. संयुक्त वर्ग –

क) खड़ी पाईवाले व्यंजन –

खड़ी पाईवाले व्यंजनों का संयुक्त रूप खड़ी पाई को हटाकर ही बनाया जाना चाहिए। जैसे-

ख + या = ख्या। इसमें 'ख' का अद्र्ध या संयुक्त रूप 'ख' होगा। इसी तरह ख्याति, श्लोक, शय्या, न्यास, प्यास, सभ्य आदि।

ख) अन्य व्यंजन –

1. 'क' तथा 'फ' के संयुक्ताक्षर इस प्रकार होने चाहिए। जैसे- क्त, फ्त। इसी तरह संयुक्त, वक्त, दफ्तर, रफ्तार आदि।
2. ङ, छ, ट, ठ, ड, ढ, द और ह के संयुक्ताक्षर हल् (्) चिह्न लगाकर ही बनाए जाने चाहिए। जैसे- वाङ्मय, विद्या, ब्राह्मण, ब्रह्मा आदि।
3. संयुक्त 'र' के (्र ्) प्रचलित तीन रूप यथावत् रहेंगे। जैसे- प्रकार, कर्म, राष्ट्र आदि।
4. 'श्र' का प्रचलित रूप ही मान्य होगा। त + र के संयुक्त रूप के लिए 'त्र' और 'त्र' दोनों में से किसी एक के प्रयोग की छूट होगी। किन्तु 'क्र' को 'क्र' या 'क्र' के रूप में नहीं लिखा जाना चाहिए।
5. हल चिह्न युक्त वर्ण से बननेवाले संयुक्ताक्षर के द्वितीय व्यंजन के साथ 'इ' की मात्रा

का प्रयोग सम्बन्धित व्यंजन के तत्काल पूर्व ही किया जाएगा, न कि पूरे युग्म से पूर्व। जैसे- द्वितीय, बुद्धिमान, चिह्नित आदि।

6. संस्कृत में संयुक्ताक्षर पुरानी शैली में ही लिखे जा सकेंगे। जैसे- संयुक्त, विद्वान, विद्या आदि।

2. विभक्ति-चिह्न -

1. हिंदी के विभक्ति-चिह्न सभी प्रकार के संज्ञा शब्दों में प्रतिपादिक से पृथक लिखे जाए। जैसे- राम ने, रावण ने, राम को, रावण को, राम से, रावण से आदि।
2. सर्वनाम शब्दों में विभक्ति-चिह्न प्रतिपादिक के साथ मिलाकर लिखे जाए। जैसे- उसने, उसको, उससे आदि।
3. सर्वनामों के साथ यदि दो विभक्ति-चिह्न हो तो उनमें से पहला मिलाकर और दूसरा पृथक् लिखा जाए। जैसे- उसके लिए, उनमें से, इनमें से, उनके पास आदि।
4. सर्वनाम और विभक्ति के बीच ही 'ही', 'तक' आदि का निपात हो तो विभक्ति को पृथक् लिखा जाए। जैसे- आप ही के लिए, मुझ तक को आदि।

3. क्रियापद/संयुक्त क्रियाएँ -

संयुक्त क्रियाओं में सभी अंगभूत क्रियाएँ पृथक्-पृथक् लिखी जाए। जैसे- आ सकता है, जा सकता है, बढ़ते चले जा रहे हैं, आ रहे हैं, कर सकता है आदि।

4. हाइफ़न -

शब्दों-शब्दों में स्पष्टता के लिए हाइफ़न का विधान किया जाता है। वह इस प्रकार हैं-

1. द्वंद्व समास में पदों के बीच हाइफ़न रखा जाए। जैसे- शिव-लीला, शिव-पार्वती-संवाद, चाल-चलन, पढ़ना-लिखना, खाना-पीना, लेन-देन आदि।
2. 'सा', 'जैसा' आदि से पूर्व हाइफ़न रखा जाए। जैसे- तुम-सा, इतना-सा, इतनी-सी, राम-जैसा, चाकू-से तेज, फटे-से आदि।
3. तत्पुरुष समास में हाइफ़न का प्रयोग केवल वहाँ पर किया जाए, जहाँ उसके बिना भ्रम होने की सम्भावना हो; अन्यथा इसकी आवश्यकता नहीं। जैसे- भू-तत्त्व आदि।

4. कठिन संधियों से बचने के लिए भी हाइफ़न का प्रयोग किया जा सकता है। जैसे- द्वि-अक्षर, द्वि-अर्थक, एक-दिवसीय, द्वि-दिवसीय आदि।

5. अव्यय –

1. अव्यय हमेशा पृथक् लिखे जाए। जैसे- आपके साथ, यहाँ तक, कार्यालय तक, दो रूपये मात्र आदि।
2. समस्त पदों में अव्यय पृथक नहीं लिखे जाएँगे। यह सर्वविदित नियम है कि समास होने पर समस्त पद एक माना जाता है। अत: उसे व्यस्त रूप में न लिखकर एक साथ लिखना ही संगत है। जैसे- प्रतिदिन, निमित्तमात्र, यथासमय, यथासंभव, मानवमात्र, प्रतिशत, यथोचित आदि।
3. सम्मानार्थक 'श्री', 'जी' आदि अव्यय भी पृथक् ही लिखे जाए। जैसे- श्री, श्रीराम जी, पंडित जी, महात्मा जी, मंत्री जी, श्यामसुंदर जी, डॉ. पंडित जी आदि।

6. श्रुतिमूलक 'य', 'व' –

1. हिंदी में 'य', 'व' को श्रुतिमूलक माना गया है। जहाँ उनका प्रयोग विकल्प से होता है, वहाँ न किया जाए; क्योंकि उसके स्वरात्मक रूप ही शुद्ध और प्रमाणित माने जाएँगे। जैसे- हुआ, हुई, गए, लिए, हुए, नई आदि। अत: यह नियम क्रियाविशेषण अव्यय आदि सभी रूपों और स्थितियों में लागू माना जाए।
2. जहाँ 'य' श्रुतिमूलक व्याकरणिक परिवर्तन न होकर शब्द का ही मूल तत्त्व हो, वहाँ वैकल्पिक श्रुतिमूलक स्वरात्मक परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। जैसे- अव्ययीभाव, स्थायी, दायित्व, अस्थायी आदि।

7. अनुस्वार तथा अनुनासिकता चिह्न –

मानक हिंदी प्रणाली के अनुसार अनुस्वार (ं) तथा अनुनासिकता चिह्न याने चंद्रबिंदु (ँ) दोनों प्रचलित रहेंगे। वे इस प्रकार हैं-

1. संयुक्त व्यंजन के रूप में जहाँ पंचमाक्षर के बाद स-वर्गीय शेष चार वर्णों में कोई वर्ण हो तो एकरूपता और मुद्रण-लेखन की सुविधा के लिए अनुस्वार का ही प्रयोग करना चाहिए। जैसे- संध्या, चंचल, गंगा, ठंडा आदि।

2. यदि पंचमाक्षर के बाद किसी अन्य वर्ग का कोई वर्ण आए अथवा वहीं पंचमाक्षर द्वारा आए तो पंचमाक्षर अनुस्वार के रूप में परिवर्तित नहीं होगा। जैसे- सम्मति, चिन्मय, सम्मेलन, अन्न, वाङ्मय, उन्मुख, अन्य आदि।

3. चंद्रबिंदु के बिना प्राय: अर्थ में भ्रम की गुंजाइश रहती है। अत: ऐसे भ्रम को दूर करने के लिए चंद्रबिंदु का प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए। जैसे- हंस-हँस, अंगना-अँगना आदि।

4. जहाँ चंद्रबिंदु के प्रयोग से मुद्रण-लेखन आदि में बहुत-सी कठिनाई हो या चंद्रबिंदु के स्थान पर बिंदु का प्रयोग किसी प्रकार का भ्रम उत्पन्न न करें, वहाँ चंद्रबिंदु के स्थान पर बिंदु के प्रयोग की छूट दी जा सकती है। जैसे- नहीं, में, मैंने, मैं आदि।

8. विदेशी ध्वनियाँ -

1. अरबी-फारसी या अंग्रेजीमूलक वे शब्द जो हिंदी का अंग बन चुके हैं और जिनकी विदेशी ध्वनियों का हिंदी ध्वनियों में रूपांतर हो चुका है, उन्हें हिंदी रूप में ही स्वीकार किए जा सकते हैं। जहाँ उनके शुद्ध विदेशी रूप में प्रयोग अभिष्ट हो अथवा उच्चारणगत भेद स्पष्ट करना हो, वहाँ हिंदी में प्रचलित रूपों में यथास्थान नुक्ते लगाए जाने चाहिए। जैसे- खाना-ख़ाना, राज-राज़, फन-फ़न आदि।

2. अरबी-फारसी की मुख्यत: पाँच ध्वनियाँ हिंदी में आयी हैं- क़, ख़, ग़, ज़, फ़। इनमें से क़ तथा ग़ ध्वनियाँ हिंदी उच्चारण में परिवर्तित हो गई हैं। शेष ख़, ज़, फ़ ध्वनियाँ अपना आस्तित्व बचाने के प्रयास में संघर्षरत हैं।

3. अंग्रेजी के जिन शब्दों में अर्द्धविवृत 'ओ' ध्वनि का प्रयोग होता है, उनके शुद्ध रूप का हिंदी में प्रयोग अभीष्ट होने पर 'आ' मात्रा के ऊपर अर्द्धचंद्र का प्रयोग किया जाए। जैसे- ऑ, ॉ आदि।

4. हिंदी में कुछ शब्दों के दो-दो रूप चल रहे हैं, उन्हें उन्हीं रूपों में स्वीकार किया जाएगा। जैसे- गरमी-गर्मी, बरफ-बर्फ, बिलकुल-बिल्कुल, कुरसी-कुर्सी, दोबारा-दुबारा आदि।

9. हल् चिह्न -

संस्कृतमूलक तत्सम शब्दों की वर्तनी में सामान्यत: संस्कृत रूप ही रखे जाए। जिन शब्दों के

प्रयोग में हिंदी हल् चिह्न लुप्त हो चुका है, उनमें उसको फिर से लगाने का यत्न न किया जाए। जैसे- महान, विद्वान आदि।

10. स्वन-परिवर्तन -

1. संस्कृतमूलक तत्सम शब्दों की वर्तनी को ज्यों-का-त्यों ग्रहण किया जाए। जैसे- उऋण, ब्रह्मा, चिह्न आदि।
2. जिन तत्सम शब्दों में तीन व्यंजनों के संयोग की स्थिति में एक द्वित्वमूलक व्यंजन लुप्त हो गया है, उसे न लिखने की छूट है। जैसे- अर्द्ध- अर्ध, उज्ज्वल- उज्वल, तत्त्व- तत्व आदि।

11. विसर्ग -

1. संस्कृत के जिन शब्दों में विसर्ग का प्रयोग होता है, वे यदि तत्सम रूप में प्रयुक्त हो. तो विसर्ग का प्रयोग किया जाना ही चाहिए। जैसे- दु:खानुभूति आदि।
2. यदि शब्द के तद्भव रूप में विसर्ग का लोप हो चुका हो तो उस रूप में विसर्ग के बिना भी काम चल जाएगा। जैसे- सुख-दु:ख के साथी आदि।

12. 'ऐ', 'औ' का प्रयोग -

हिंदी में ऐ (.ै.) और औ (.ौ.) का प्रयोग दो प्रकार की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए होता है। (1) पहले प्रकार की ध्वनियाँ- 'है', 'और' आदि में है। (2) दूसरे प्रकार की ध्वनियाँ- गवैया, कौवा आदि में है। दोनों में 'ऐ', 'ऐं', 'ओ', 'औ' इन्हीं चिह्नों का प्रयोग होता है। अत: स्पष्ट होता है कि इन दोनों प्रकार की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए 'ऐ', 'औ' इन्ही चिह्नों का ही प्रयोग किया जाए।

13. पूर्वकालिक प्रत्यय -

पूर्वकालिक प्रत्यय 'कर' क्रिया से मिलाकर लिखा जाए। जैसे- मिलाकर, मिटाकर, खुलकर, खा-पीकर, रो-रोकर आदि।

14. अन्य नियम -

1. शिरोरेखा का प्रयोग प्रचलित रहेगा।

2. पूर्ण विराम के लिए खडी पाई (।) का प्रयोग किया जाए।

3. पूर्ण विराम को छोड़कर शेष सभी विराम आदि चिह्न वही ग्रहण कर लिए जाए, जो अंग्रेजी में या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचलित हैं। जैसे- अल्पविराम (,), अद्र्धविराम (;) आदि।

1.4 स्वयं-अध्ययन के लिए प्रश्न

1.4.1 लिंग पर बहुविकल्पी प्रश्न

1. मनुष्य के विचार-विनिमय का प्रमुख साधन ..... है।

   (क) लिपि *(ख) ध्वनि* *(ग) भाषा* *(घ) शब्द*

2. लिंग के ..... प्रकार होते हैं।

   (क) पाँच *(ख) दो* *(ग) तीन* *(घ) चार*

3. ..... ने लिंग-निर्धारण के चार साधन बताए हैं।

   (क) देवेंद्रनाथ शर्मा *(ख) देवेंद्र शर्मा* *(ग) ब्रजेंद्र शर्मा* *(घ) रामकुमार वर्मा*

4. भाषा का विकास कठिन से ..... की ओर होता है।

   (क) बृहत *(ख) विशेष* *(ग) विकास* *(घ) सरल*

5. अधिकांश रूप में लिंग-निर्धारण ..... से किया जाता है।

   (क) लोक-व्यवहार *(ख) जन-विधान* *(ग) लोक-विधान* *(घ) नये-विधान*

6. लौकिक लिंग ..... हैं।

   (क) एक *(ख) दो* *(ग) चार* *(घ) तीन*

7. प्राणिवाचक संज्ञा में ..... लिंग के आधार पर लिंग-निर्धारण किया जाता है।

   (क) व्यावहारिक *(ख) प्राकृतिक* *(ग) व्याकरणिक* *(घ) लौकिक*

8. ..... शब्दों के लिंग बहुत कुछ माने हुए होते हैं।

   (क) प्राणिवाचक *(ख) पुरुषवाचक* *(ग) अप्राणिवाचक* *(घ) स्त्रीवाचक*

9. लिंग-व्यवस्था में ..... दिखाई देती है।

   (क) सुचारूता *(ख) नियमितता* *(ग) एकरूपता* *(घ) अनियमितता*

10. अपभ्रंश से विकसित आधुनिक आर्य भाषाओं के लिंग के आधार पर हिंदी लिंग-व्यवस्था के ..... वर्ग बताए जाते हैं।

(क) तीन *(ख) चार* *(ग) पाँच* *(घ) दोन*

4.1.2 वचन पर बहुविकल्पी प्रश्न

1. बिना वचन के ..... आदि का बोध नहीं होता है।

(क) शब्द *(ख) संख्या* *(ग) सर्वनाम* *(घ) नाम*

2. हिंदी में वचन का विकास ..... से हुआ है।

(क) संस्कृत *(ख) प्राकृत* *(ग) अपभ्रंश* *(घ) अंग्रेजी*

3. भारोपीय परिवार की भाषाओं में ..... वचन प्रचलित थे।

(क) तीन *(ख) सात* *(ग) चार* *(घ) दो*

4. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में ..... वचन की व्यवस्था पाई जाती हैं।

(क) एक *(ख) तीन* *(ग) चार* *(घ) दो*

5. साधारणत: व्यक्तिवाचक, भाववाचक तथा द्रव्य वाचक संज्ञाओं का प्रयोग .....में होता है।

(क) बहुवचन *(ख) एकवचन* *(ग) द्विवचन* *(घ) अन्य वचन*

6. वचन एक ..... कोटि (तत्त्व) है।

(क) व्यावसायिक *(ख) शाब्दिक* *(ग) व्याकरणिक* *(घ) व्यावहारिक*

7. शब्दों के विकारी रूपों का ..... कहा जाता है।

(क) सर्वनाम *(ख) नाम* *(ग) वचन* *(घ) संज्ञा*

8. वचन-व्यवस्था मराठी, गुजराती आदि में ..... है।

(क) बराबर-सी *(ख) अलग-सी* *(ग) नियमित-सी* *(घ) अनियमित-सी*

9. बहुवचन का क्षेत्र बड़ा ..... होता है।

(क) अलग *(ख) व्यापक* *(ग) सीमित* *(घ) गौण*

10. वचन-प्रणाली विविध भाषाओं में ..... रूपों में मिलती हैं।

(क) एकरूप *(ख) सुव्यवस्थित* *(ग) नियमित* *(घ) अलग-अलग*

4.1.3 कारक पर बहुविकल्पी प्रश्न

1. कारकों को व्याकरण में ..... कहते हैं।

   (क) संज्ञा *(ख) सर्वनाम* *(ग) विभक्तियाँ* *(घ) विश्लेषण*

2. कारकों के ..... भेद माने जाते हैं।

   (क) सात *(ख) चार* *(ग) तीन* *(घ) आठ*

3. कर्ता कारक के साथ ..... विभक्ति चिह्न का प्रयोग होता है।

   (क) ने *(ख) को* *(ग) की* *(घ) के*

4. कर्म कारक का विभक्ति चिह्न ..... है।

   (क) ने *(ख) की* *(ग) को* *(घ) से*

5. वस्तु, व्यक्ति, स्थान आदि से पृथकता या तुलना का बोध ..... कारक से होता है।

   (क) संबंध *(ख) अपादान* *(ग) सम्प्रदान* *(घ) करण*

6. संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से यह ज्ञात होता है कि वह क्रिया का साधन है, वह ..... कारक कहलाता है।

   (क) करण *(ख) अर्पादान* *(ग) कर्ता* *(घ) कर्म*

7. अधिकरण कारक में विभक्ति चिह्न प्रयुक्त होने का आधार ..... प्रकार का होता है।

   (क) तीन *(ख) चार* *(ग) दो* *(घ) एक*

8. सम्बोधन कारक के साथ आगे या पीछे बहुधा ..... चिह्न आता है।

   (क) प्रश्नार्थक *(ख) विस्मयादिबोधक* *(क) निर्देशक* *(घ) योजक*

9. कारक शब्द का अभिप्राय ..... से संबंध बतानेवाला तत्त्व है।

   (क) संज्ञा *(ख) विभक्ति* *(ग) वचन* *(घ) क्रिया*

10. सम्बन्धकारक का विभक्ति चिह्न ..... होता है।

    (क) का, की, के *(ख) ने, को, से* *(ग) में, पर* *(घ) से*

4.1.4 विराम चिह्न पर बहुविकल्पी प्रश्न

1. विराम चिह्नों के गलत प्रयोग से अर्थ का ..... हो जाता है।

   (क) प्रयोग *(ख) चिह्न* *(ग) अनर्थ* *(घ) विराम*

2. हिंदी में विराम चिह्नों का प्रचार ..... ढंग के अनुसार बढ गया है।

(क) अंग्रेजी (ख) अरबी (ग) फारसी (घ) उर्दू

3. अपूर्ण विराम से भी कम ठहराव का संकेत ..... से होता है।

(क) पूर्ण विराम (ख) उपविराम (ग) अल्पविराम (घ) अद्‌र्ध विराम

4. बातचीत करते समय रूकावट सूचित करने के लिए ..... चिह्न का प्रयोग किया जाता है।

(क) कोष्ठक (ख) निर्देशक (ग) उद्‌धरण (घ) योजक

5. किसी प्रचलित बडे शहर के छोटे रूप को अर्थात् प्रथम अक्षर को दर्शाने के लिए ..... चिह्न का प्रयोग किया जाता है।

(क) लाघव (ख) विवरण (ग) अवतरण (घ) अनुवृत्ति

6. जब लिखने में एक ही शब्द बार-बार ठीक नीचे लिखना पडता है तब ..... चिह्न का प्रयोग किया जाता है।

(क) त्रुटि (ख) लोप (ग) लाघव (घ) अनुवृत्ति

7. त्रुटि चिह्न का प्रयोग कर ठीक उसके ..... छूटे अंश को लिखा जाता है।

(क) आगे (ख) नीचे (ग) ऊपर (घ) मध्य

8. गोपनीय या अश्लील पदों को छुपाने के लिए ..... चिह्न का प्रयोग किया जाता है।

(क) काकपद (ख) लोप (ग) विवरण (घ) लाघव

9. हिंदी भाषा की प्रकृति ..... है।

(क) अलंकारिक (ख) आनंदात्मक (ग) विवरणात्मक (घ) विश्लेषणात्मक

10. उद्‌धरण चिह्न के ..... रूप होते हैं।

(क) दो (ख) चार (ग) सात (घ) तीन

4.1.5 वाक्य के प्रकारों पर बहुविकल्पी प्रश्न

1. भाषा की न्यूनतम पूर्ण सार्थक इकाई ..... है।

(क) पद (ख) वाक्य (ग) ध्वनि (घ) शब्द

2. रूप तथा रचना की दृष्टि से वाक्य के ..... प्रकार किए जाते हैं।

(क) तीन *(ख) चार* *(ग) पाँच* *(घ) दो*

3. अर्थ के आधार पर वाक्य के प्रकार किए जाते हैं।

(क) सात *(ख) चार* *(ग) दस* *(घ) आठ*

4. यदि वाक्य में कार्य के होने या करने का सामान्य कथन हो, निषेधात्मक नहीं तो उसे ..... वाक्य कहते हैं।

(क) निषेधार्थक *(ख) प्रश्नार्थक* *(ग) विधानार्थक* *(घ) आज्ञार्थक*

5. शब्द जब वाक्य में आ जाता है, तब वह ..... बनता है।

(क) पद *(ख) वाक्य* *(ग) अर्थ* *(घ) ध्वनि*

6. ..... वाक्य में एक ही उद्देश्य और एक ही विधेय रहता है।

(क) प्रश्नार्थक *(ख) संयुक्त* *(ग) मिश्र* *(घ) साधारण*

7. मिश्र वाक्य में एक प्रधान वाक्य और एक अथवा अधिक आश्रित ..... आ जाते है।

(क) शब्द *(ख) उपवाक्य* *(ग) अर्थ* *(घ) पद*

8. संयुक्त वाक्य में जुडे हुए दोनों वाक्य ..... होते हैं।

(क) स्वतंत्र *(ख) एक साथ* *(ग) अलग* *(घ) विधेय*

9. अर्थ-बोध के स्तर पर भाषा की मूल इकाई ..... होती है।

(क) वाक्य *(ख) अर्थ* *(ग) प्रश्न* *(घ) शब्द*

10. प्रत्येक शब्द में अलग ..... की सामर्थ्य होता है।

(क) विस्तार-बोध *(ख) अर्थ-बोध* *(ग) विषय-बोध* *(घ) सामान्य-बोध*

4.1.6 मानक वर्तनी पर बहुविकल्पी प्रश्न

1. वर्तनी के उर्दू में ..... कहा जाता है।

(क) लिपि *(ख) मानकता* *(ग) हिज्जे* *(घ) वर्ण*

2. हिंदी की वर्तनी में ..... है।

(क) अनेकरूपता *(ख) सीमितता* *(ग) एकरूपता* *(घ) भिन्नता*

3. लिखने की रीति को ..... कहा जाता है।

(क) शब्द या वाक्य *(ग) वर्ण या शब्द*

(ख) वर्तनी या अक्षरी *(घ) ध्वनि या उच्चारण*

4. खडी पाईवाले व्यंजनों का संयुक्त रूप ..... को हटाकर बनाया जाता है।

(क) व्यंजन *(ख) स्वर* *(ग) अक्षर* *(घ) खडी पाई*

5. हिंदी के विभक्ति चिह्न सभी प्रकार के संज्ञा शब्दों में प्रतिपादिक से ..... लिखे जाते हैं।

(क) एकसाथ *(ख) प्रथम* *(ग) पृथक* *(घ) भिन्न*

6. शब्दों-शब्दों में स्पष्ट के लिए ..... का विधान किया जाता है।

(क) हाइपन *(ख) क्रिया* *(ग) अनुस्वार* *(घ) व्याकरण*

7. अरबी-फारसी की क़, ख़, ग़, ज़, फ़ पाँच ध्वनियाँ ..... में आयी हैं।

(क) मराठी *(ख) संस्कृत* *(ग) उर्दू* *(घ) हिंदी*

8. संस्कृतमूलक तत्सम शब्दों की वर्तनी में सामान्यत: ..... रूप ही रखा जाता है।

(क) मराठी *(ख) संस्कृत* *(ग) हिंदी* *(घ) अरबी*

9. पूर्वकालिक प्रत्यय ..... से मिलाकर लिखे जाते हैं।

(क) 'कर' क्रिया *(ख) 'कर' वाक्य* *(ग) 'कर' पद* *(घ) 'कर' शब्द*

10. हिंदी में पूर्ण विराम के लिए ..... का प्रयोग किया जाता है।

(क) अल्पविराम *(ख) अद्‌र्ध विराम* *(ग) खडी पाई* *(घ) बिंदु*

1.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ

1. **इकाई** : एकांक।
2. **मानक** : प्रमाण (स्टँडर्ड)।
3. **मानक वर्तनी** : जिसको स्तरीय रूप में मान लिया गया है वह वर्तनी।
4. **संयुक्त** : जुड़ा या मिला हुआ।
5. **पृथक्** : अलग।

6. **धातु** : मूल क्रिया, क्रिया का मूल रूप।

7. **संरचना** : विशेष प्रकार की रचना

8. **सादृश्य** : रूप, प्रकार आदि की समानता, एकरूपता।

9. **साहचर्य** : साथ रहने का भाव, संग, साथ।

10. **तत्सम** : उसके समान अर्थात् संस्कृत के मूल शब्दों के समान, शब्द के जो मूल भाषा के शुद्ध रूप में हो।

11. **समीचीन** : उपयुक्त, ठीक, उचित, न्यायसंगत।

12. **विधेय** : जिसका करना उचित हो, जो नियम या विधिपूर्वक किया जाता है।

13. **समास** : दो या दो से अधिक शब्दों का मिलकर एक होना।

14. **तत्पुरुष** : व्याकरण में एक समास, जिसमें पहले पद में कर्ताकारक तो होता ही नहीं और शेष कारकों की विभक्तियाँ लुप्त होती हैं और अंतिम पद का अर्थ प्रदान होता है।

15. **अभीष्ट** : वांछित, मनोनीत, अभिप्रेत, आशय के अनुसार।

16. **वर्णमाला** : लिपि के वर्णों की सूची।

17. **उपलाधि** : प्राप्ति, ज्ञान-सिद्धि।

1.6 स्वयं-अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

1.4.1 लिंग

1. *(ग) भाषा*
2. *(ख) दो*
3. *(क) देवेंद्रनाथ शर्मा*
4. *(घ) सरल*
5. *(क) लोक-व्यवहार*
6. *(घ) तीन*
7. *(ख) प्राकृतिक*

8. *(ग) अप्राणिवाचक*
9. *(घ) अनियमितता*
10. *(क) तीन*

4.1.2 वचन

1. *(ख) संख्या*
2. *(क) संस्कृत*
3. *(क) तीन*
4. *(घ) दो*
5. *(ख) एकवचन*
6. *(ग) व्याकरणिक*
7. *(ग) वचन*
8. *(क) बराबर-सी*
9. *(ख) व्यापक*
10. *(घ) अलग-अलग*

4.1.3 कारक

1. *(ग) विभक्तियाँ*
2. *(घ) आठ*
3. *(क) ने*
4. *(ग) को*
5. *(ख) अपादान*
6. *(क) करण*
7. *(क) दो*
8. *(ख) विस्मयादिबोधक*
9. *(घ) क्रिया*
10. *(क) का, की, के*

4.1.4 विराम चिह्न

1. *(ग) अनर्थ*
2. *(क) अंग्रेजी*
3. *(घ) अद्‌र्ध विराम*
4. *(ख) निर्देशक*
5. *(क) लाघव*
6. *(घ) अनुवृत्ति*
7. *(ग) ऊपर*
8. *(ख) लोप*
9. *(घ) विश्लेषणात्मक*
10. *(क) दो*

4.1.5 वाक्य के प्रकार

1. *(ख) वाक्य*
2. *(क) तीन*
3. *(घ) आठ*
4. *(ग) विधानार्थक*
5. *(क) पद*
6. *(घ) साधारण*
7. *(ख) उपवाक्य*
8. *(क) स्वतंत्र*
9. *(घ) शब्द*
10. *(ख) अर्थ-बोध*

4.1.6 मानक वर्तनी

1. *(ग) हिज्जे*
2. *(क) अनेकरूपता*

3. *(ख) वर्तनी या अक्षरी*
4. *(घ) खडी पाई*
5. *(ग) पृथक*
6. *(क) हाइफ़न*
7. *(घ) हिंदी*
8. *(ख) संस्कृत*
9. *(क) 'कर' क्रिया*
10. *(ग) खडी पाई.*

1.7 सारांश

1. मनुष्य भाषा के माध्यम से अपने विचारों एवं भावों को अभिव्यक्त करता है। भाषा ही उसकी अभिव्यक्ति का सहज माध्यम है। वस्तुत: भाषा की शुद्धता व्याकरण पर निर्भर होती है। इसलिए मनुष्य को व्याकरण का ज्ञान होना आवश्यक होता है। व्याकरण के ज्ञान द्वारा ही भाषा की शुद्धता के नियम स्पष्ट होते हैं। यह नियम लिखित भाषा पर आधारित होते हैं। उससे भाषा में स्तरीयता आती है।

2. 'लिंग' का शाब्दिक अर्थ प्रतीक या चिह्न अथवा निशान होता है। संज्ञाओं के जिस रूप से उसकी पुरुष जाति या स्त्री-जाति का पता चलता है, उसे ही लिंग कहा जाता है। अत: लिंग से पुरुष और स्त्री होने का पता चलता है, उनका भेद स्पष्ट होता है। लिंग के दो प्रकार होते हैं- लौकिक और व्याकरणिक। हिंदी में दो लिंग है- पुल्लिंग और स्त्रीलिंग।

3. वचन एक व्याकरणिक कोटि है, तत्त्व है। संज्ञा के जिस रूप से एकत्व या अनेकत्व अर्थ का पता चलता है, उसे वचन कहते हैं। वे मनुष्य के मुख से निकलनेवाले सार्थक शब्द होते हैं। हिंदी में दो वचन है- एकवचन और बहुवचन।

4. संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से यह ज्ञात होता कि वाक्य में उसका क्या स्थान है और वाक्य के अन्य शब्दों से तथा विशेषत: क्रिया से उसका क्या संबंध है, उसे कारक कहते हैं। हिंदी में कारकों के आठ भेद माने जाते हैं। कारकों के बोध के लिए संज्ञा या सर्वनाम के आगे जो प्रत्यय लगाए जाते हैं, उन्हें व्याकरण में विभक्तियाँ कहा जाता है। अत: विभक्तियों से ही कारकों की पहचान होती है।

5. व्याकरण में विराम चिह्नों का विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। उनके गलत प्रयोग से अर्थ का अनर्थ हो जाता है अर्थात् अर्थ ही बदल जाता है। विराम का अर्थ है- विश्राम या ठहराव। जब हम भाषा द्वारा अपने भावों को प्रकट करते हैं, तब एक विचार या उसके कुछ अंश को व्यक्त करने के पश्चात् थोड़ा-सा रूकते हैं, उसे ही विराम कहते हैं। और उसे स्पष्ट करने के लिए जिन चिह्नों का प्रयोग किया जाता है, वे ही भाषा में विराम चिह्न कहलाते हैं।

6. जिस अर्थपूर्ण शब्द-समूह द्वारा कोई एक विचार पूर्ण रूप से प्रगट हो जाता है, वह शब्द-समूह वाक्य कहलाता है। दूसरे शब्दों में, पूर्ण अर्थ की प्रतीति करानेवाले सार्थक शब्द-समूह को वाक्य कहते हैं। रूप तथा रचना की दृष्टि से वाक्य के तीन प्रकार किए जाते हैं- साधारण वाक्य, संयुक्त वाक्य और मिश्र वाक्य। साथ ही अर्थ के आधार पर वाक्य के विधानार्थक, निषेधार्थक, प्रश्नार्थक, आज्ञार्थक, विस्मयादिबोधक, इच्छार्थक, संदेहार्थक, संकेतार्थक आठ भेद किए जाते हैं।

7. 'वर्तनी' को उर्दू में 'हिज्जे' और अंग्रेजी में Spelling कहा जाता है। वस्तुत: 'वर्तनी' शब्द संस्कृत भाषा का है। जिसका अर्थ है- शब्द के वर्ण, उनका क्रम तथा उच्चारण विधि। अत: लिखने की रीति को वर्तनी या अक्षरी कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, जिस शब्द में जितने वर्ण या अक्षर जिस अनुक्रम में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें उसी क्रम में लिखना ही 'वर्तनी' कहलाया जाता है। भाषा को लिपिबद्ध करने की सैद्धांतिक प्रक्रिया का नाम ही वर्तनी है। इसमें मानक शब्द अंग्रेजी स्टँडर्ड के प्रतिशब्द के रूप में है। अत: मानक वर्तनी से तात्पर्य है- लिपि की शुद्धता, मानकता, शिष्टता अथवा मानक उच्चारण।

1.8 स्वाध्याय

अ) लघुत्तरी प्रश्न

1. लोक-व्यवहार की दृष्टि से लिंग-निर्धारण स्पष्ट कीजिए।
2. लिंग-निर्धारण के साधन संक्षेप में बताइए।
3. हिंदी लिंग-व्यवस्था के ऐतिहासिक संदर्भ पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।
4. हिंदी वचन-व्यवस्था और वचन निर्धारण को संक्षेप में बताइए।
5. विभक्तिरहित बहुवचन के नियमों पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।

6. विभक्तिसहित बहुवचन के नियमों पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।
7. कर्ता कारक को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
8. कर्म कारक को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
9. करण कारक को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
10. अपूर्ण विराम को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
11. निर्देशक चिह्न को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
12. उद्धरण चिह्न को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
13. रूप तथा रचना की दृष्टि से वाक्य के प्रकारों को संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।
14. मानक वर्तनी के किन्हीं तीन नियम सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
15. संयुक्त वर्ण को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
16. विभक्ति चिह्न को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

आ) दीर्घोत्तरी प्रश्न

1. लिंग-निर्धारण के नियमों पर सोदाहरण संक्षेप में प्रकाश डालिए।
2. बहुवचन-निर्धारण के नियमों पर सोदाहरण संक्षेप में प्रकाश डालिए।
3. किन्हीं तीन कारकों पर सोदाहरण प्रकाश डालिए।
4. किन्ही तीन विराम चिह्नों पर सोदाहरण प्रकाश डालिए।
5. अर्थ के आधार पर वाक्य के प्रकारों पर प्रकाश डालिए।
6. वाक्य की परिभाषाएँ देते हुए रूप और रचना की दृष्टि से वाक्य के प्रकारों पर प्रकाश डालिए।
7. मानक वर्तनी के किन्हीं तीन नियमों को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

1.9 क्षेत्रीय कार्य

1. लौकिक और व्याकरणिक दृष्टि से लिंग-निर्धारण कर पहचानने की कोशिश करें।

2. हिंदी वचन-व्यवस्था और वचन-निर्धारण के नियमों के आधार पर वचन-निर्धारण कर पहचानने की कोशिश करें।

3. अध्ययन-अध्यापन के समय वाक्य में प्रयुक्त कारकों को पहचानने की कोशिश करें।

4. वाक्य में, पदों में, वाक्यांशों तथा खंड वाक्यों में प्रयुक्त विराम चिह्नों को पढ़ते या लिखते समय पहचानने की कोशिश करें।

5. किसी रचना को ध्यान से पढ़कर नियमों के आधार पर वाक्यों के प्रकार पहचानने की कोशिश करें।

6. हिंदी भाषा के वर्तनी-संबंधी निर्धारित मानक नियमों के आधार पर देवनागरी-लिपिसंबंधी त्रुटियों के निराकरण की कोशिश करें।

1.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

1. संक्षिप्त हिंदी व्याकरण : कामताप्रसाद गुरू।

2. मानक हिंदी : ब्रजमोहन।

3. व्यावहारिक हिंदी व्याकरण तथा रचना : डॉ. हरदेव बाहरी।

4. प्रयोजनमूलक हिंदी : डॉ. माधव सोनटक्के।

5. हिंदी व्याकरण एवं रचना : प्रा. कृ. ज. वेदपाठक।

6. व्यावहारिक हिंदी व्याकरण : डॉ. नामदेव उतकर।

7. हिंदी का व्यावहारिक व्याकरण : डॉ. विजयपाल सिंह।

❑ ❑ ❑

इकाई–2

कविता, कहानी तथा यात्रा वृत्तांत लेखन

कविता, कहानी तथा यात्रा वृत्तांत लेखन : स्वरूप, महत्त्व तथा उपयोगिता
कविता, कहानी तथा यात्रा वृत्तांत के क्षेत्र : सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 विषय–विवेचन

2.3.1 कविता, कहानी तथा यात्रा वृत्तांत लेखन : स्वरूप, महत्त्व तथा उपयोगिता

2.3.1.1 कविता लेखन का स्वरूप

2.3.1.2 कविता लेखन का महत्त्व तथा उपयोगिता

2.3.1.3 कहानी लेखन का स्वरूप

2.3.1.4 कहानी लेखन का महत्त्व तथा उपयोगिता

2.3.1.5 यात्रा वृत्तांत लेखन का स्वरूप

2.3.1.6 यात्रा वृत्तांत लेखन का महत्त्व तथा उपयोगिता

2.3.2 कविता, कहानी तथा यात्रा वृत्तांत के क्षेत्र–सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक

2.3.2.1 कविता का सामाजिक क्षेत्र

2.3.2.2 कविता का राजनीतिक क्षेत्र

2.3.2.3 कविता का सांस्कृतिक क्षेत्र

2.3.2.4 कहानी का सामाजिक क्षेत्र

2.3.2.5 कहानी का राजनीतिक क्षेत्र

2.3.2.6 कहानी का सांस्कृतिक क्षेत्र

2.3.2.7 यात्रा वृत्तांत का सामाजिक क्षेत्र

2.3.2.8 यात्रा वृत्तांत का राजनीतिक क्षेत्र

2.3.2.9 यात्रा वृत्तांत का सांस्कृतिक क्षेत्र

2.4 सारांश

2.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ

2.6 स्वयं-अध्ययन के लिए प्रश्न

2.7 स्वयं-अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

2.8 स्वाध्याय

2.9 क्षेत्रीय कार्य

2.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

2.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद-

- कविता के स्वरूप से अवगत होंगे।
- कविता का महत्त्व एवं उपयोगिता जान जाएँगे।
- कविता के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्र से परिचित होंगे।
- कहानी का स्वरूप जान जाएँगे।
- कहानी का महत्त्व एवं उपयोगिता से अवगत होंगे।
- कहानी के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्र से वाकीब होंगे।
- यात्रावृत्त के स्वरूप से अवगत होंगे।
- यात्रावृत्त के महत्त्व और उपयोगिता से परिचित होंगे।
- यात्रावृत्त के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्र समझ जाएँगे।

2.2 प्रस्तावना

साहित्य शब्द से मानव जीवन की अभिव्यक्ति और समग्र ज्ञान की चेतना का बोध होता है। सम्रग जीवन और ज्ञान को अपनाकर उसे शब्द-चित्रों द्वारा सजाने की शक्ति किसी एक व्यक्ति में नहीं होती है। इसी कारण हर रचनाकार अपनी रचना में अलग-अलग देश, काल और मानव जीवन की विभिन्न प्रवृत्तियाँ का चित्रण अपने-अपने तरीके से करता है। साहित्य में वर्णित वैषम्य के कारण ही साहित्य का कोई एक स्वरूप नहीं होता है। साहित्य की कोई निश्चित व्याख्या नहीं है। रचनाकार मानव स्वभाव की विभिन्न प्रवृत्तियाँ, विभिन्न विधाओं के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। इसमें कविता, कहानी और यात्रा वृत्तांत मुख्य है। इन विधाओं की अपनी अलग-अलग पहचान है। मानव जीवन की हर दशा और दिशा इन विधाओं में केंद्रीभूत है। यही वजह है कि कविता, कहानी और यात्रा वृत्तांत के लेखन का महत्त्व तथा उपयोगिता मानव जीवन के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में आज भी बरकरार है। मानव जीवन का समग्रालोचन करनेवाली इन विधाओं का विवेचन-विश्लेषण निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत हैं-

2.3 विषय विवेचन

2.3.1 कविता, कहानी तथा यात्रा वृत्तांत लेखन : स्वरूप, महत्त्व तथा उपयोगिता

2.3.1.1 कविता लेखन का स्वरूप :-

कविता साहित्य की वह विधा है; जिसमें किसी मनोभावों को कलात्मक रूप में किसी भाषा के द्वारा सजाया जाता है। कविता से मनुष्य के भावों एवं विचारों की रक्षा होती है। संसार की किसी वस्तु या चीज को कविता इस तरह से व्यक्त करती है, मानो वे वस्तु एवं चीज आँखों के सामने नृत्य करने लगते हैं और मूर्तिमान दिखाई देने लगते हैं। उसे शब्दबद्ध करने के लिए बुद्धि से काम लेना पड़ता है। जब मनोवेगों का प्रवाह जोर से बहने लगता है तब कविता का जन्म होता है। कविता मनोभावों को उच्छवासित करके मानव जीवन में नव चैतन्य डाल देती है। कवि सृष्टि सौंदर्य से मोहित होकर काव्य सृजन करता है। कविता की इसी प्रेरणा से समाज की कार्य प्रवृत्ति बढ़ जाती है। यही कार्य प्रवृत्ति बढ़ाने के लिए मन में वेगों का आना आवश्यक है। अगर दारिद्रय और सूखे से आकुलते बच्चे के पास बैठी माता का आर्त्तस्वर सुनाई दिया जाए तो वह मनुष्य क्रोध एवं करुणा से विव्हल हो उठेगा। इसका उपाय करने के लिए वह कम-से-कम संकल्प तो अवश्य करेगा। इस तरह का दृश्य केवल काव्य के द्वारा ही खड़ा किया जा सकता है।

वाचिक परंपरा के रूप में जन्मी कविता ने आज लिखित रूप धारण कर लिया है। कविता के मूल में संवेदना होती है, राग तत्त्व होता है, लयात्मकता होती है, संगीतात्मकता होती है। दरअसल काव्य संवेदना समस्त समष्टि से जुड़ने और उसे अपना बना लेने का बोध देती है। अच्छी कविता बार-बार पढ़ने का न्यौता देती है, बिलकुल संगीत की तरह। जब तक आप दूर हो तो रहस्यमयी लगेगी और पास आते ही उसे बार-बार और देर तक सुनने का मन करेगा। अच्छी कविता आप से सवाल करती है। बार-बार पढ़ने के बावजूद आपकी स्मृति को कुरेदती है, सोचने और विचार करने के लिए मजबूर कर देती है। कविता की अनोखी दुनिया का सबसे पहला उपकरण शब्द है। शब्द के मेलजोल से बनती है कविता। दरअसल शब्दों से जुड़ना कविता की दुनिया में प्रवेश करना है। कवि शब्दों के माध्यम से कविता का सृजन करता है। वैसे देखा जाए तो रचनात्मकता हर व्यक्ति के अंदर छिपी होती है; आवश्यकता है उसे तराशने की।

वस्तुत: साहित्य शब्द में बहुत ही व्यापक संकल्पना निहित है। इससे समस्त मानव जीवन की अभिव्यक्ति और समग्र ज्ञान की चेतना का बोध होता है। समग्र मानव जीवन और समग्र ज्ञान को समाहित कर शब्द चित्रों में उकेरने की शक्ति किसी एक व्यक्ति, किसी एक समाज में संभव नहीं होती। यही वजह है कि हर व्यक्ति, हर समाज अपने-अपने ढंग से साहित्य का सृजन करता रहता है। इसलिए कविता लेखन का निश्चित ढाँचा या स्वरूप नहीं है; क्योंकि कभी कविता छंदोबद्ध रचना हुआ करती थी, लेकिन यह मान्यता आज धूमिल पड़ी हुई दिखाई देती है अर्थात् कविता छंदों में बद्ध होनी चाहिए। यह बंधन धीरे-धीरे ढिला पड़ गया। साहित्य शब्द समाज में विभिन्न अर्थों से प्रचलित हैं। अंग्रेजी में Literature के रूप में प्रचलित है, जो 'लेटर' धातु से बना है; जिसका अर्थ है- अक्षर। मराठी में साहित्य का अर्थ सामान के रूप में प्रचलित है। लेकिन यहाँ उसका अर्थ शब्दों में छिपा ज्ञान बोध या भाव की अनुभूति से संबंधित है, जिसे साहित्य की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। साहित्य शब्द की व्युत्पत्ति है- साहित्य= सहित + यत् प्रत्यय। साहित्य का अर्थ है शब्द और अर्थ के यथावत सहभाव का होना। यह सहभाव सिर्फ शब्द और अर्थ का नहीं है। कई विद्वानों ने साहित्य शब्द की व्युत्पत्ति हित के साथ मानी है। संस्कृत में एक उक्ति है- 'सहितस्य: भाव:।' जो भाव से युक्त है वही साहित्य है। साहित्य शब्द संस्कृत के 'सहित' शब्द से बना है। सहित का अर्थ विभिन्न वस्तुओं का मेल-मिलाप है। यह मेल-मिलाप किसी और का नहीं, कवि के भावों और विचारों का है। संस्कृत में साहित्य के लिए काव्य शब्द का प्रयोग हुआ करता था, मगर सातवीं-आठवीं शताब्दी में काव्य शब्द साहित्य के रूप में प्रचलित हुआ; जो गद्य-पद्य की सारी विधाओं से संबंधित है। कविता में शब्द कवि-कर्म से संबंध रखता है। 'कम' धातु कवि के बोलने, कलरव करने, आकाश, व्याप्ति का परिचायक है। इसलिए तो कहा जाता है- 'जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि।' कवि-कर्म को संस्कृत आचार्यों ने असाधारण, अलौकिक

और आनंदकर माना है। विधाता की सृष्टि नियमों में बद्ध है, लेकिन कवि की सृष्टि नियमों में बद्ध नहीं है। कवि कार्य-कारण भाव की श्रृंखला में मुक्त, आनंदमयी रचना का सृजन करता रहता है। कविता रसमय, रमणीय, लयात्मक, संगीतमयी, संस्मरणीय और वाणीमय होती है। ऐसे वाणीमय साहित्य को 'वाङ्मय' कहते हैं; जो साहित्य का पर्यायवाची शब्द है। पहले साहित्य और काव्य शब्द एक-दूसरे के विकल्प या पर्याय हुआ करते थे। आज साहित्य ने विस्तृत अर्थ ग्रहण कर लिया है, जिसमें साहित्य की गद्य और पद्य की सारी विधाएँ समाहित होती हैं।

काव्य लेखन मूलत: कवि का निजी कर्म है। जब निरंतर चिंतन-मनन से कवि की भावनाओं के प्रबल आवेग का उद्रेक होता है, तब शब्दों के माध्यम से कविता मुखरित होती है। नए बिंब, विचार, दृश्य, अनुभूति और छंद, संगीतात्मकता आदि काव्य के मूल तत्त्व माने जाते हैं। अरस्तू अनुकरण के सिद्धांत को काव्य की आत्मा मानते रहें। उनके अनुसार-वास्तविक जगत्, अनुकृति की भावना, अनुकृति में शब्द, छंद और संगीतात्मकता काव्य के मूल तत्त्व है। विलियम शेक्सपियर काव्य में कल्पना को प्रधानता देते हैं; क्योंकि कवि कल्पना ही आखिरकार अज्ञात वस्तुओं और विचारों को आकार देती है। कवि हृदय में भावनाओं का प्रबल आवेग ही कविता निर्मिति का प्रधान कारण है। विलियम वर्डस्वर्थ के मतानुसार-काव्य शांति के समय में स्मरण किए हुए प्रबल मनोवेगों का स्वच्छंद प्रवाह है। वर्डस्वर्थ भावों को प्रधानता देते हैं। सिंगमंड फ्रायड काव्य का संबंध मानव मन की कुंठाओं से जोड़ते हैं। उनका कहना था कि मानव मन की दमित एवं कुंठित इच्छाएँ काव्य के माध्यम से प्रस्फुटित होती है। कॉलरिज कविता में अभिव्यक्ति को प्रधानता देते हुए कविता को उत्तमोत्तम शब्दों का उत्तमोत्तम क्रमविधान मानते हैं। जॉन मिल्टन ने कविता को सरल, प्रत्यक्षमूलक और रागात्मक कहा है। आचार्य विश्वनाथ रसयुक्त वाक्य को काव्य मानते हैं। पंडितराज जगन्नाथ ने रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करनेवाले शब्दों को काव्य कहा है। भामह ने शब्द और अर्थ का सहित भाव काव्य माना है। दरअसल कविता में भाव या विचार महत्वपूर्ण होते हैं। डॉ. भगीरथ मिश्र के अनुसार कविता में भाव तत्त्व सबसे अधिक प्रभाव उत्पन्न करने वाला है। भाव कवि की कल्पना का प्रेरक है, छंद के स्वरूप का विधायक और शब्द प्रवाह के उत्स को खोलने वाला है। यह पाठक और श्रोता का भी संस्कार होता है। ऐसा संस्कार केवल अनुभूतियों का प्रदर्शन नहीं करता, वह अपने द्वंद्वं एवं संघर्ष की जटिलता से व्यथित हो उठता, तो कभी उल्लास की भावना से सराबोर हो उठता है और अपने आपको थोड़ी देर के लिए क्यों न हो, विस्मृत कर देता है। ऐसी सत्यता की प्रतिमूर्ति कविता कल्पना और मनोवेगों के द्वारा जीवन को परिभाषित करती है। ऐसी कविता में बिंब, प्रतीक, तुक, लय और भाषा की भूमिका महत्त्व रखती है। ऐसी कविता में बिंबों का निर्माण कुशलता एवं सक्षमता के साथ होना चाहिए; क्योंकि कविता की भावप्रवणता और कलात्मकता बिंबों

पर निर्भर करती है। कविता में प्रतीकों का प्रयोग अमूर्त, अश्रव्य, अदृश्य और अप्रस्तृत भावों को मूर्त, श्रव्य, दृश्य और प्रस्तुत बना देता है। कविता की तुक और लय मन के भावों का संप्रेषण और विचारों का भावप्रवण करती है। भाषा में शब्द-संयोजन, शब्द चयन, शब्द समूह का विशेष खयाल रखा जाता है। कविता जनसाधारण की भाषा में हो तो वह विशेष भाती है। छंद, अलंकार, गुण और भाषा कविता को प्रभावी एवं रमणीय बना देते हैं। आज कविता निराकार वस्तुओं को आकार देती है, दमित, कुंठित भावों को अभिव्यक्ति देती है, तथ्यों को चित्रमय बना देती है, पात्रों के व्यक्तित्व को उभारती है, जीवन के अनुभव एवं ज्ञान को निश्चित रूप देती है। ऐसा बिंबधर्मी, कल्पनामयी, चित्रमयी रूप पाठकों को वास्तविकता का एहसास दिलाता है। काव्य कल्पना और बुद्धि के योग से और अभिव्यक्ति के माध्यम से मानवी भावना को रमणीय बना देता है।

संक्षेप में, कविता भाव या विचार के बिना पूर्णत्व नहीं पाती। कविता लेखन में भाव या विचार ही कार्यरत होते हैं। ये कविता में ही अंतर्निहित होते हैं। कविता में भाव, बुद्धि, कल्पना और शैली का कलापूर्ण समन्वय होना जरूरी है। दरअसल भाव ही कवि की कल्पना का प्रेरक तत्त्व है, जो उसे साक्षात करता है। यदि कविता का विषय सत्य पर आधारित हो, जीवन और जगत् को परिभाषित करनेवाला हो, तो वह जीवन का परमानंद देने में कामयाब दिखाई देता है।

2.3.1.2 कविता लेखन का महत्त्व तथा उपयोगिता :

जिस प्रकार मानव जीवन के विविध क्षेत्रों के महत्त्व तथा उपयोगिता की बात की जाती है, उसी प्रकार कविता के क्षेत्र में भी उसके महत्त्व तथा उपयोगिता की बात की जाती है। यह महत्त्व तथा उपयोगिता केवल नैतिक एवं सामाजिक दृष्टि से नहीं है। यदि ऐसा होता तो दुनिया के नैतिक एवं सामाजशास्त्रीय ग्रंथ विश्व के सर्वोत्कृष्ट साहित्य की कोटि में आ जाते। विश्व की अनेक भाषाओं में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं; जिनमें कई घटना, प्रसंग या पात्रों के क्रिया-कलाप सर्वथा नैतिक नहीं होते और फिर भी उसका सामाजिक मूल्य आज भी बरकरार है। स्त्री-पुरुष या आसुर-देवता के बाह्य क्रिया-कलापों से ही उसकी नैतिकता-अनैतिकता लक्षित होती है। इससे ही पाठक या दर्शक के दिल में नैतिकता को लेकर विश्वास जाग उठता है और अनैतिक को लेकर अविश्वास जाग उठता है।

काव्य में सत्य, शिव और सुंदर का सुखद समन्वय होता है; जिससे स्वस्थ समाज का गठन होता है। इन तीनों का अलग-अलग महत्त्व है। इनमें कई आलोचक सत्य को प्रधानता देते हैं जिसे वैज्ञानिक आधार है, तो कुछ नीतिप्रचारकों ने शिव तत्त्व को आदर प्रदान किया हुआ दिखाई देता है और सौंदर्यवादी आलोचक सौंदर्य को ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व मानते हैं। काव्य के महत्त्व

तथा उपयोगिता में व्यक्ति और उसकी सत्ता पर विचार किया जाना जरूरी है। हर व्यक्ति दोहरा जीवन जीता है। व्यक्ति का एक जीवन व्यक्तिगत जीवन होता है। उस व्यक्तिगत जीवन के मूल्य भी अलग होते हैं। दूसरा महत्त्व इस दृष्टि से है वह समाज की इकाई है और उस समाज में उसका अलग मूल्य होता है। मनुष्य पहले व्यक्ति है, जिसके अपने व्यक्तिगत मूल्य है। वही व्यक्ति किसी मानव समाज का, परिवार, नगर, प्रांत, राष्ट्र या विश्व का सदस्य या नागरिक बन जाता है; तब वह अनायास ही समाज का अंग बन जाता है। उसके प्रत्येक विचार, कर्म और कल्पना में मूल्य का सवाल उपस्थित हो जाता है। व्यक्ति के ये मूल्य समाज, नगर, देश और विश्व के मूल्यों से टकराते हैं। इन मूल्यों के द्वंद्वं या संघर्ष से व्यक्ति का व्यक्तित्व बनता भी है और बिगड़ता भी है। इन विभिन्न मूल्यों के परस्पर टकराव से एक ही मूल्य बच जाता है और वह है- मानवीय मूल्य। यही मानवीय मूल्य या मानवता सर्वोपरि है। यही मूल्य सार्थक एवं सारवान होते हैं; जो कि साहित्य या काव्य के केंद्र में निहित होते हैं। मानवीय मूल्य ही साहित्य के माध्यम से समाज में विवेक पैदा करने की दृष्टि से सहायक होते हैं। इन्हीं मानवीय मूल्यों को बचाना और उसका प्रचार-प्रसार करने की दृष्टि से काव्य का महत्त्व मानना होगा। आखिरकार साहित्य की उपयोगिता इन्सान को इन्सान बनाने में ही तो है। रिचर्ड्स के अनुसार काव्य में ऐसे मूल्य निहित होते हैं जो मनुष्य के मानसिक स्वास्थ्य को ठीक कर देते हैं, उसकी सुरक्षा कर देते हैं। यह बात ठीक वैसी ही है जैसे कोई चिकित्सक व्यक्ति की शारीरिक व्याधि को ठीक कर देता है, उसी प्रकार काव्य मनुष्य के मानसिक स्वास्थ्य को ठीक कर देता है। काव्य मनुष्य की विरोधी भावनाओं, विरोधी अंतरद्वंद्वों के बीच समतुल्य स्थापित कर देता है। हमारे आवेगों और हमारी अभिलाषा की तृष्टि काव्य में निहित शिव तत्त्व कराता है। पाश्चात्य विचारक रिचर्ड्स के अनुसार कला मूल्यवान अनुभव देती है। इस मूल्यवान अनुभव में प्रधान प्रेरणा के साथ-साथ विभिन्न अंगीभूत प्रेरणाओं की तुष्टि होती है। इन प्रेरणाओं में कवि और कवि-कर्म महत्त्वपूर्ण बन जाता है। कवि अपनी अनुभूतियाँ काव्य में इस खूबी के साथ पिरोता है कि वे अनुभूतियाँ चिरस्थायी बन जाती है। काव्य में इन्हीं अनुभूतियों का सर्वोपरि महत्त्व होता है। दरअसल अच्छा वही होता है; जो मूल्यवान है और मूल्यवान वही होता है; जो मन की स्थिति को संतुलित कराता है। काव्य भी आखिकार मन की मानसिक स्थिति को संतुलित करने का ही कार्य करता है। कवि काव्य के माध्यम से समाज में नैतिक, सामाजिक और धार्मिक मूल्यों की स्थापना करता है। इतना ही नहीं, वह समता, बंधुता, मानवता, दया, प्रेम, शांति जैसे जीवनमूल्यों को मनोवैज्ञानिक ढंग से काव्य में इस तरह समाहित करता है कि जिससे स्वस्थ समाज की निर्मिति होती है, मगर इसमें वह काव्य सौंदर्य को कहीं भी हानि नहीं पहुँचाता है।

भावनाओं का आंदोलन करने की ताकत केवल कविता में ही होती है; साहित्य की अन्य

विधा में नहीं। आधुनिक युग में बौद्धिक शुष्कता से पीड़ित मानव को काव्य उपवन शीतलता की निरंतर आवश्यकता बनी रहती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार; ज्यों-ज्यों हमारी वृत्तियों पर सभ्यता के नए-नए आवरण चढ़ते जाएँगे, त्यों-त्यों एक ओर तो कविता की आवश्यकता बढ़ती जाएगी; दूसरी ओर कवि-कर्म कठिन होता जाएगा। सूचना प्रौद्योगिकी के युग में भयावह बात यह है कि कृत्रिम कवियों के बौद्धिक क्रिया-कलापों के चक्कर में कविता विकृत रूप धारण कर लेगी तो उसमें साधारणीकरण का अभाव रहेगा। ऐसी कविता में न तो भावनाओं का प्रबल आवेग होगा और न मानवीय मूल्यों की हिफाजत होगी। इस स्थिति में ऐसा काव्य निर्मित होना चाहिए, जो मानवीय मूल्यों की हिफाजत करता हो, तो कविता का महत्त्व तथा उपयोगिता और भी बढ़ जाएगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

2.3.1.3 कहानी लेखन का स्वरूप :

कहानी का संबंध अनादिकाल से मानव सभ्यता के साथ चला आया है। मनुष्य में कहने-सुनने की एक जन्मजात प्रवृत्ति होती है। कहानी अन्य विधाओं की तुलना में अधिक लोकप्रिय विधा है। कहानी आज के युग की सामर्थ्यशाली और महत्त्वपूर्ण विधा है। कहानी का मूल अर्थ है कहना या जो कही जाए, वह कहानी है। वक्ता और श्रोता के बीच कही और सुनी जाने वाली बात मूलत: कहानी ही होती है। किसी घटना या प्रसंग के बारे में एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को कथन करना या कहना कहानी है। कहानी का प्राचीनतम रूप वेदों में भी पाया जाता है, लेकिन गद्य विधा के रूप में उसका विकास उन्नसवीं शती से माना जाता है।

कहानी संक्षिप्त आकार का ऐसा आख्यान है; जो पाठकों पर भावपूर्ण प्रभाव डाल सके। यह मानव जीवन के किसी एक पक्ष, प्रसंग या घटना का ऐसा संवेदनात्मक चित्रण है जिसे अनुभूत तो किया जा सकता है, मगर शब्दों में बाँधना कठिन हो जाता है। यह घटना या प्रसंग मौलिक जगत् या मानसिक जगत् से उठते हैं और कहानी के माध्यम से आकार लेते हैं। कहानी जीवन की एक झलक मात्र है। यही झलक पाठकों को चमत्कृत कर देती है और रोचकता के साथ जीवन की चरम अनुभूति देती है। कहानी में एक ही मूल भाव होता है; जो उसको लक्ष्य की ओर ले जाता है। कहानी को अंग्रेजी में 'शॉर्ट स्टोरी', संस्कृत में 'कथा' और बंगला में 'गल्प' कहते हैं। दरअसल यह मनुष्य की सामाजिकता की रचनात्मक भावाभिव्यक्ति है। यह एक ऐसी रचना है; जो मानव जीवन के किसी एक अंग को कहानीकार अपने मनोभावों से प्रदर्शित करता है। मुंशी प्रेमचंद के अनुसार- सबसे उत्तम कहानी वह होती है; जो किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर आधारित हो। कहानी लेखन में कई बिंदुओं का खयाल रखना पड़ता है। जैसे- संवेदना की खोज और उसकी प्रामाणिकता,

जिज्ञासा, रोचकता, प्रतीक, संकेत, आकार, प्रस्तुति, शीर्षक, आरंभ और अंत, प्रभावान्विति आदि बिंदु कहानी लेखन के लिए मार्गदर्शक हो सकते हैं। कहानी लेखन की प्रकिया में नया लेखक किसी एक संवेदना पर चिंतन कर विषय को सोचे-समझे। जब विषय का हर पहलू या पक्ष मानव के मन-मस्तिष्क में तैयार हो तो एक ही बैठक में उसे शब्दबद्ध करें, ताकि उसकी संवेदना क्षीण न हो सके। कहानी का वर्ण्य विषय जीवन या जगत् की कोई घटना, प्रसंग, विचार या भावना हो सकती है। इस संवेदना में एकता होनी चाहिए, जो कहानी का प्राणतत्त्व है; क्योंकि संवेदनात्मक एकता से कहानी में प्रभावात्मकता आ जाएगी। कहानी में संवेदना का प्रबल आवेग जितना तीव्र होगा उतनी ही कहानी अच्छी होगी। कहानी में केवल कोरी कल्पना नहीं होती, बल्कि वह जीवन का व्यापक सत्य से अनुप्रणित करने वाली होती है। सत्य के कारण ही कहानी में जान आती है, जो पाठकों को प्रभावित करती है। श्यामसुंदर दास के अनुसार-आख्यायिका (कहानी) एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को लेकर लिखा हुआ नाटकीय आख्यान है। मनोवैज्ञानिकता कहानी की प्रमुख विशेषता है। चरित्र और कथानक में स्वाभाविकता होनी चाहिए। मनोविज्ञान से ही कहानी पाठकों के दिलो-दिमाग पर छा जाती है। कहानी में क्रमबद्धता के साथ गतिशीलता होनी चाहिए। इसमें विश्रृंखलता को कोई स्थान नहीं है। भावपूर्ण संक्षिप्त संवाद कहानी को गति दे सकते हैं। कहानी की लघुता एवं भावों की तीव्रता पाठकों के मन को झकझोर देती है। गुलाब राय के मतानुसार- छोटी कहानी एक स्वत:पूर्ण रचना है। कहानी में संक्षिप्तता और औत्सुक्यपूर्ण वर्णन होता है। कहानी में घटनाओं के अलावा परिस्थिति का चित्रण अधिक होता है। कहानी का कथानक आरंभ से संघर्षपूर्ण होता है; जो चरमसीमा पर अंत पाता है। उसमें विस्तार और विषयांतर की कोई गुंजाईश नहीं है। जब द्वंद्वं की स्थिति से कहानी चरमसीमा की ओर अग्रसर होती है, तब जीवन की अत्यंत प्रभावकारी झलक दिखाई देती है। वस्तुत: कहानी जीवन के एक मार्मिक पक्ष की कलात्मक अभिव्यक्ति है। कहानी लेखन में कथावस्तु, पात्र या चरित्र-चित्रण, संवाद, देशकाल वातावरण, भाषा शैली और उद्देश्य ये तत्त्व महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। कहानी केवल परंपरा का विरोध नहीं करती, बल्कि अपना रूप, शैली और नए विषयों की खोज करती है। उसमें अनुभव की प्रामाणिकता पर विशेष जोर दिया गया है।

सार यह कि कहानी जीवन के प्रभावपूर्ण अंश, मनोभाव या तीव्र संवेदन के कथात्मक रूप की कलात्मक अभिव्यक्ति है। कहानी आकार से लघु होती है और जीवन के किसी एक प्रसंग की मार्मिक व्याख्या करती है। ऐसी कहानी में कल्पना, नाटकीयता, मनोवैज्ञानिकता, सक्रियता, प्रभान्विति, स्वाभाविकता, सरलता, स्पष्टता आदि गुण विद्यमान होते हैं। कहानी एक ऐसी विधा है; जो जीवन के किसी एक अंग या मनोभाव का मनोहारी चित्रण करती है।

2.3.1.4 कहानी लेखन का महत्त्व तथा उपयोगिता :

कहानी लेखन केवल मनोरंजन के लिए नहीं किया जाता है, बल्कि मानवी मन का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने, मानसिक गुत्थियों को सुलझाने, जीवन के सत्यों का मार्मिक उद्‌घाटन करने, चरित्रों पर प्रकाश डालने, मानव जीवन की समस्याओं पर प्रकाश डालने और सत्य, शिव और सुंदरता का विधान करने के लिए लिखी जाती है। दरअसल प्रकृति और चरित्र, मानव-मानव के शाश्वत संबंध, मानवी मूल्य, भावों, विचारों तथा अनुभूतियों के विभिन्न रूपों से व्याख्या करने की दृष्टि से कहानी का साहित्य में महत्त्व है। जब कहानी सच्चाई बयां करती है, अमूर्त संवेदनाओं को मूर्त रूप देती है, तब उसकी उपादेयता बढ़ जाती है। वह व्यष्टि-समष्टि दोनों पर प्रभाव छोड़ती है। कहानी परिस्थिति की घनिष्ठता से जुड़ी होती है अर्थात् कहानी में एकता और अन्विति होती है। इसमें कहानीकार घटनाओं की श्रृंखला का खयाल रखता है और पात्रों की प्रत्येक मनोदशा का रेखांकन करता है। वैसे देखा जाए तो कहानियों के विषय का ताना-बाना वास्तविकता के धरातल पर बुना गया हो तो वे कहानियाँ महत्त्वपूर्ण और जीवनोपयोगी बन जाती है। कहानियों में चित्रित वर्णन यदि सच्चाई के करीब होता है तो सारी घटनाएँ आँखों के सामने ओझल हो जाती है। इसलिए कहानी का वर्ण्य विषय वर्तमान से ताल्लुक रखने वाला होता है तो पाठकों को वह विषय अपना विषय लगता है। ऐसे विषय वर्तमान समाज में जूझ रहे पात्रों की समस्या हल कर देते हैं। तब कहानी कहानी न रहकर जीवन का सार बन जाती है। मानव जीवन के दो पहलू हैं- सुख और दुःख। कोई दुःख में सुख की अनुभूति करें तो उसका जीवन सफल हो जाता है। वह किसी भी दुःख में हार नहीं सकता, बल्कि अपराजित होकर दुनिया को कूच कर देता है। कहानी मानव जीवन की जटिलता एवं विवशता प्रस्तुत कर देती है। कहानी में चित्रित पात्र जिस प्रकार समस्याओं का सामना करते हैं, उसी प्रकार पाठक भी अपनी समस्याओं का हल निकालते हैं। दरअसल कहानी जीवन के ऐसे विचार बिंदुओं का रेखांकन करती हैं; जिससे मानव जीवन की रेखा प्रकाशित हो उठती है।

सार यह कि कहानी मानसिक रहस्य को खोलती है, जीवन के मार्मिक पक्षों का उद्‌घाटन करती है, जीवन के सत्यों को खोल देती है, मानव चरित्रों का उद्‌घाटन करती है, जीवन की विभिन्न समस्याओं को उठाती है और उसका समाधान भी प्रस्तुत करती है। इन सभी तथ्यों की दृष्टि से कहानी का साहित्यिक महत्त्व तथा उपयोगिता अनिवार्य रूप में स्वीकार करना पडता है।

2.3.1.5 यात्रा वृत्तांत लेखन का स्वरूप :

यात्रा वृत्तांत आधुनिक साहित्य की देन है। यात्रा वृत्तांत एक ऐसी विधा है; जो प्रकृतिपरक है। यात्रा साहित्य का बुनियादी ढाँचा प्रकृति-चित्रण पर खड़ा है। जीवनी विधा की तरह यात्रा वृत्तांत

में दूसरों के जीवन के कुछ क्षणों का वर्णन किया जाता है; प्रकृति का चित्रण होता है; जिसमें कभी कभार कथा तत्त्व गायब होता है। साहित्य का मूल आधार ही मनुष्य जीवन है। लेखक किसी-न-किसी रूप में वह अपना जीवन कम-अधिक मात्रा में साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। इन विधाओं के विभाजन में प्रवृत्ति प्रभावशाली है। यही वजह है कि यात्रा वृत्तांत प्रकृति-चित्रण के साथ-साथ जीवनांशों, भावनाओं, कथा तत्त्वों तथा वैचारिकता को भी समेट लेता है।

यात्रा साहित्य एक विशिष्ट विधा है। एक स्थान से दूसरे स्थान तक गमना-गमन की क्रिया यात्रा कहलाती है। यात्रा शब्द की व्युत्पत्ति 'या+ष्ट्रन' शब्द से हो चुकी है। यात्रा का अर्थ है- सफर। यात्रा का सीधा अर्थ एक स्थान से दूसरे स्थान चले जाना अर्थात् निरंतर स्थान परिवर्तन या संचारशीलता को यात्रा कहा जाता है। यात्रा वृत्त का अर्थ है यात्रा का वृत्तांत। वृत्तांत का अर्थ है जो घटित हुआ हो। यात्रा वृत्तांत में वृत्तांत का अर्थ है वृत्त का अंत और यात्रा के अंत के बाद इतिवृत्त प्रस्तुत करना ही यात्रा वृत्तांत है। देश-विदेश में घटित घटना, देखे दृश्य, प्राप्त अनुभूतियों का वृत्तांत लिखना ही यात्रा वृत्तांत है। इसमें कल्पना के बजाय यथार्थ को स्थान दिया जाता है। यहाँ पात्रों की सृष्टि बहुत कम दिखाई देती है; जबकि प्रकृति ही पात्र बनकर उभरती है। पं. उमेश शास्त्री ने यात्रा वृत्तांत के कलात्मक और रूपात्मक दोनों अंगों का विचार करते हुए यथार्थ पर जोर दिया है। महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने अपनी पुस्तक 'घुमक्कड शास्त्र' में लिखा है-'घुमक्कडी एक रस है, जो काव्य रस की तरह भी कम नहीं है। कठिन मार्गों को तय करने के बाद नए स्थानों पर पहुँचकर हृदय में जो भावोद्रेक पैदा होता है, वह एक अनुपम चीज है। उसकी कविता के रस से हम तुलना कर सकते हैं और यदि कोई ब्रह्म परक विश्वास रखना हो तो वह उसे ब्रह्म समझेगा।' महापंडित यात्रा वृत्तांत की तुलना ब्रह्मानंद से करते हैं। इसमें केवल भावों को महत्त्व दिया गया है। यात्रा वृत्तांत लेखन में आत्मीयता, कल्पना-प्रवणता, भाव-प्रवणता, चित्रात्मकता, रोचकता, संचरणशीलता, वस्तुनिष्ठता, तथ्यात्मक दृश्यांकन, विवरणात्मकता, संवेदनशीलता आदि तत्त्वों का होना जरूरी है। साथ में यात्रा साहित्य में यात्रियों की आंतरिक प्रेरणा और बाह्य परिवेश का अंकन जरूरी होता है। पहले जीतने की इच्छा से युद्ध करने के लिए राजा अपने सैन्य के साथ गमन या प्रस्थान करता था, उसे यात्रा कहा जाता था।

यात्रा साहित्य में चित्रित देश-विदेश का बदलता परिवेश, प्रकृतिगत परिवर्तित रूपों का दर्शन मानवी मन को सुखद एवं आनंद का आस्वाद देता है। मनुष्य प्रकृति प्रेमी एवं सौंदर्य प्रेमी है। सौंदर्यबोध की तलाश में मनुष्य उत्साह भाव से प्रेरित होकर जब यात्रा करता है तब उसका मुक्त भाव रेखांकित होता है; उसे यात्रा साहित्य या यात्रा वृत्तांत कहा जाता है। यात्रा वृत्तांतकार यायावरी

या घुमक्कड मनोवृत्ति के होते हैं, वे जहाँ भी यात्रा करने जाते हैं; वहाँ से साहित्य की भांति कुछ-न-कुछ ग्रहण करते हैं। यात्रा स्थानों से ग्रहण किए गए प्रेम, सौंदर्य, भाषा, यादें और जीवन के खट्टे-मीठे अनुभव वे अपनी रचना में साझा करते हैं; जो यात्रा साहित्य नाम से जाने जाते हैं। सचमुच मानव अनादि काल से यात्रा करता आ रहा है। साहित्य के क्षेत्र में घुमक्कड अनुभवों को साझा करना अभिव्यक्ति का एक नया रूप हैं; जिसे यात्रा वृत्तांत कहा जाता है। आदिकाल में यात्रा का महत्त्व था, आज भी है और भविष्य में बरकरार रहेगा। आदिकाल में इस विधा का स्वरूप अलग था। तब लेखक देश-विदेश में घूम कर लोगों को वाणी के माध्यम से अपने अनुभवों को बताया करता था। सचमुच यात्रा साहित्य का आरंभ भारतेंदु युग से ही माना जाता है। यात्रा वृत्तांत में लेखक हर स्थल और क्षेत्रों में से अद्‌भुत सत्य को ग्रहण करता है और बाहरी जगत् की प्रतिक्रियास्वरूप जो भावनाएँ उसके दिल में उमड़ती है; उसी को पूरी क्षमता या चेतना के साथ रेखांकित करता है। लेखक की खूबी से ही शुष्क या निरस वर्णन भी मधुर एवं भावविभोर करने वाला बन जाता है। पाठक उस यात्रा साहित्य से इतना समरस होता है कि वह यात्रा करने के लिए लालायित हो उठता है। यात्रा लेखक को अधिक संवेदनशील न होकर निरपेक्ष होना चाहिए; ताकि यात्रा साहित्य यात्रा साहित्य बन जाए न कि आत्म चरित्र या आत्म स्मरण। यात्रा साहित्य में यात्रा स्थानों के प्राकृतिक सौंदर्य के साथ-साथ दर्शनीय स्थलों का विवरण प्रधानता से किया जाता है। परिवेश का निरीक्षण एवं प्रस्तुतिकरण इस विधा का केंद्रीय कथ्य होता है। यात्रा साहित्य में परखता, स्वच्छंदता, आत्मीयता आदि गुणों का होना जरूरी है। यात्रा साहित्य में विविध शैलियाँ विभिन्न रूपों में पिरोई जाती है। इनमें निबंधात्मक शैली, पत्रात्मक शैली, डायरी शैली काफी चर्चित शैलियाँ हैं, जो यात्रा साहित्य को जीवंतता प्रदान करती है। संक्षेप में, यात्रा के दौरान आए अनुभवों को कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करना ही यात्रा वृत्तांत है।

2.3.1.6 यात्रा वृत्तांत लेखन का महत्त्व तथा उपयोगिता :

यात्रा वृत्तांत का महत्त्व बहुआयामी है। यात्रा वृत्तांत में पाठक अपने रमणीय अनुभवों, यात्रा स्थानों का हू-ब-हू वर्णन पाठकों तक पहुँचा देता है; जिसके माध्यम से पाठक उन स्थानों का अनुभव कर लेते हैं। इतना ही नहीं, पाठक लेखक द्‌वारा प्रस्तुत अनुभवों का लाभ उठाता है। यात्रा वृत्तांतकार उस समाज या स्थानों की संस्कृति के विभिन्न आयामों को अपने यात्रा वृत्तांत में प्रस्तुत करता है; जिससे लोग एक-दूसरे की संस्कृति से परिचित हो जाते हैं। प्रारंभिक काल में यात्रा शिक्षा और धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु हुआ करती थी। इसी दौरान आए अनुभवों को लेखक अपनी किताब में प्रस्तुति देता था; जिसका लाभ पाठक वर्ग उठाता था। यात्रा वृत्तांतकार जिन स्थानों की यात्रा

करता है, वहाँ का तटस्थ दृष्टा के रूप में निरीक्षण-परीक्षण करता है और लिख देता है; जिसमें प्रकृतिगत और स्थानगत विशेषताएँ प्रतिबिंबित हो उठती है। दरअसल यात्रा साहित्य देश-विदेश की व्यापक जीवन पद्धति को उभारने का कार्य करता है। यात्रा वर्णन से मानव जीवन चेतनामयी एवं आनंददायी बन जाता है। एक जगह से दूसरी जगह यात्रा करना गतिशीलता के साथ-साथ प्रगतिशीलता का लक्षण माना जाता है। नि:संदेह यात्रा के अनुभवों का बारीकी से अंकन करना और पाठक को प्रत्यक्ष उस माहौल का एहसास दिलाने की दृष्टि से यात्रा साहित्य का महत्त्व और उपयोगिता है। यात्राकार को अपना नाम रोशन करने के लिए भी यात्रा साहित्य का महत्त्व होता है। मनुष्य का विकास यात्रा से संबंधित दिखाई देता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि यदि प्रभु राम, श्रीकृष्ण, वास्को-दी-गामा, सिकंदर, विवेकानंद अपने जीवन में यात्रा नहीं करते, तो उनका नाम दुनियाभर में रोशन नहीं हो पाता। साहित्य की बात करें, तो राहुल सांस्कृत्यायन से निर्मल वर्मा तक का समग्र यात्रा साहित्य इसी बात की प्रतीति देता है। आदिकाल के वीरग्रंथों में युद्ध का आँखों देखा वर्णन अन्यत्र दुर्लभ है। इसका मुख्य कारण यह है कि तत्कालीन कवि राजा के साथ युद्ध के स्थान पर जाया करते थे और समय आने पर लड़ते भी थे। यात्रा साहित्य से विभिन्न यात्रा स्थानों का ज्ञान घर बैठे मिल सकता है। देश-विदेश में मानवता और नैतिक मूल्यों के मापदंड अलग-अलग होते हैं; जिसका परिचय यात्रा साहित्य से हो जाता है। जैसे भारतीय संस्कृति में विवाह बाह्य संबंध, कुमारी माता, विधवा का संतान को जन्म देना आदि अनैतिक माना जाता है, मगर विदेश में ये सब नैतिक माना जाता है। यात्रा साहित्य से देश-विदेश के लोगों की सभ्यता, प्रकृति, संस्कृति और जीवन दृष्टि का परिचय हो जाता है। मानव जीवन की प्रेरणाओं को जानने-पहचाने और उनकी आस्था-अनास्था, विश्वास-अविश्वास का ज्ञानार्जन यात्रा साहित्य से मिल जाता है। रंगमयी एवं गंधमयी प्रकृति की अनेक छटाएँ यात्रा से ही अनुभव की जा सकती है। मनुष्य अनेक अनुभूतियों का गहरा ज्ञान आखिरकार प्रकृति से हासिल करता है। दो संस्कृति, समाज, परिवेश, भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करने की दृष्टि से यात्रा साहित्य का महत्त्व तथा उपयोगिता है। यात्रा साहित्य का महत्त्व अंकित करते हुए डॉ. हरिमोहन अपनी किताब 'साहित्यिक विधाएँ : पुनर्विचार' में लिखते हैं-'जो लोग घूम-फिरकर दूसरे देशों की वेशभूषा, रहन-सहन और बोली का अध्ययन नहीं करते, वे बिना सींग के बैल के समान हैं। जब आदमी समुद्र से घिरी पृथ्वी का भ्रमण करता है, तब वह सज्जनों के आचरण, दुर्जनों की चेष्टा, विविध प्रकार के लोगों की उत्कंठा, विदग्ध जनों के परिहास, गंभीर और गूढ़ शास्त्रों के तत्त्व से परिचित होता है। यात्रा से मानव बुद्धि का विकास होता है। घुमक्कड व्यक्ति समाज के लिए हितकर होता है; क्योंकि दुनिया भर के अनुभव, शिक्षा और ज्ञान घुमक्कड व्यक्ति को ही मिल जाता है। उसका अनुभव संसार समृद्ध एवं संपन्न हो जाता है। यात्रा के बाद अपने समृद्ध अनुभव लेखन के माध्यम से शब्दबद्ध कर लेखक दूसरों को बाँटता है, दूसरों

की जिज्ञासा एवं कौतुहल को संतुष्ट कर देता है। जब ये अनुभव यात्रा वृत्तांत के रूप में आकार लेते हैं, तब वे दूसरे यात्री के लिए दिशादर्शक बन जाते हैं।

यात्रा के कारण मनुष्य का व्यक्तित्व बहुआयामी बन जाता है। अनेक अनुभूतियों से उसका ज्ञान अधिक गहरा हो जाता है। यायावरी वृत्ति से मुनष्य में उल्लास, उमंग, उत्साह एवं आनंद की भावना प्रस्फुटित हुई। लेखक यात्रा के दौरान आए अनोखे अनुभवों को पाठकों के साथ साझा करता है। यात्रा लेखन के दौरान यात्राकार उन्हीं अनुभवों को पुन: भोगता है और उनका आनंद भी उठाता है, जबकि प्रत्यक्ष रूप में कष्टप्रद और पीड़ादायक रहे होते हैं। इसमें उसका मनोरंजन भी होता है। यात्रा साहित्य से लेखक और पाठक के बीच तादात्म्य स्थापित होता है, उनमें एकात्मकता का भाव जागृत हो उठता है। यात्रा का सबसे अहम उपयोग यह है कि मनुष्य यात्रा के दौरान प्रकृति से विशालता और उदारता ग्रहण करता है और अपने जीवन जीने का संकीर्ण दायरा छोड़कर आजाद पंछी की तरह मुक्ति का आनंद लेता है। अत: यात्रा मानव जीवन का अहम हिस्सा है।

अनादि काल से चला आया यात्रा का सिलसिला कभी जीविकोपार्जन के लिए रहा, तो कभी नए तथ्यों की खोज के लिए रहा। लेकिन एक बात आवश्य कही जा सकती है कि यात्रा साहित्य मनुष्य की मानवता को फलने-फुलने का अवसर जरूर देती है। धर्म एवं संस्कृति के प्रचार प्रसारक, ऋषि-मुनि, साधु-संत तथा आचार्यों ने भी यात्राएँ की और वे संस्कृति के संवाहक रहें। आखिरकार यात्रा-साहित्य से पाठक एक-दूसरे की संस्कृति से परिचित हो जाते हैं। इतना ही नहीं, वे प्रकृति का मनोहारी चित्रण पढ़कर चेतनामयी एवं आनंददायी बन जाते हैं।

2.3.2 कविता, कहानी तथा यात्रा वृत्तांत के क्षेत्र-सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक :-

2.3.2.1 कविता का सामाजिक क्षेत्र :

जब कविता शब्दाकार लेती है तब वह अनायास ही समाज का, समाज की राजनीति का और संस्कृति का हिस्सा बन जाती है अर्थात् कविता कौन-कौन से क्षेत्र में प्रवेश करती है यानी कविता किस प्रांगण में प्रवेश करती हैं; इसमें सामाजिक क्षेत्र मुख्य है; जिसका विवेचन-विश्लेषण कई रूप में दृष्टव्य है। जैसे- चंद्रमा के बिना शीतल प्रकाश की कल्पना नहीं की जा सकती, वैसे समाज के बिना जीवनव्यापी काव्य की कल्पना नहीं की जा सकती। चंद्रमा का अस्तित्व उसकी शीतलता है और समाज का अस्तित्व साहित्य है। साहित्य से ही समाज सत्यम्, शिवम् और सुंदरम् की कामना करता है। काव्य एक श्रेष्ठ कला है। यदि इस काव्य कला से मनुष्य जीवन से निकाल दिया तो

मानव जीवन निरस, ऊबाऊ बन जाएगा। उसे सत्य, शिव और सुंदरम की प्रतीति नहीं होगी। इससे मनुष्य अमानवीय एवं असंस्कृत बन जाएगा। काव्य मनुष्य का जीवन असंस्कृति से संस्कृत, अमानवीयता से मानवीय, असुंदरता से सुंदर, कुसंस्कार से सुसंस्कारी बना देता है। आखिरकार मानव जीवन का हित सुंदरता में ही है और सुंदर ही मंगल है। सत्य के लिए मानव अपनी आत्मा का विस्तार कर देता है। सत्य, शिव और सुंदर मानव की आत्मा के विस्तार के आधार पर ही सुसंस्कारी समाज बन जाएगा। मनुष्य अपने साथ दूसरों का भी विचार करता है। उससे समाज का गठन होता है। काव्य का सृजन करने वाला कवि जिस प्रकार सौंदर्य, शिव और सत्य को चाहने वाला स्वभाव कारण बन जाता है, उसी प्रकार उसकी समाज जीवन की अनुभूति भी कारण बन जाती है। समाज काव्य-निर्मिति का प्रेरक कारण बन जाता है। साहित्य ही समाज को सत्य, शिव और सुंदरता से युक्त सुसंस्कृत बनने की प्रेरणा देता है। प्रेरणा की दृष्टि से या प्रबल आवेग पैदा करने की दृष्टि से समाज और काव्य अर्थात् साहित्य का अन्योन्याश्रित संबंध है। कोई भी कवि अपने सामाजिक दायित्व से मुँह मोड़ नहीं सकता। इसलिए समाज के अच्छे और बुरे पहलू; जो कवि ने अनुभव किए हैं, वही कविता का विषय बन जाते हैं। जब तक कविता का सामाजीकरण और साधारणीकरण नहीं होता, तब तक कविता का मूल उद्देश्य सफल नहीं होता है। इसलिए कविता का प्रधान लक्ष्य व्यक्ति की अनुभूतियों, मान्यताओं या कल्पनाओं का सामाजीकरण या साधारणीकरण करना होता है। जहाँ कविता में कवि की निजता की अनुभूतियाँ सामाजीकरण में बाधक सिद्ध होगी, वहाँ वह गुण के बजाय दोष बन जाता है। कवि को अपनी वैयक्तिकता को सामाजिक रूप देकर ही अभिव्यक्त करना पड़ता है। तभी काव्य के माध्यम से सामान्य बात असामान्य बन जाती है। सामान्य व्यक्ति और साहित्यकार में यही अंतर है कि सामान्य व्यक्ति अपनी निजता को सामाजिक रूप नहीं दे पाता, मगर साहित्यकार या कवि अपनी निजता का सामाजीकरण करता है, साधारणीकरण करता है। भारतीय एवं पाश्चात्य आचार्यों ने काव्य के साधारणीकरण, सामाजीकरण या निर्वैयक्तिकरण पर जोर दिया है। दरअसल कवि अपनी निजी बात को सामाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा निर्वैयक्तिकता में परिवर्तित कर देता है। इसलिए कवि की वेदना, पुकार, शोक केवल उसका अपना नहीं रह जाता; वह समग्र समाज का करुण शोक बन जाता है। सार यह कि निजता काव्य का आधार है, तो निर्वैयक्तिकरण उसका लक्ष्य है। वैयक्तिकता या निजता ही निर्वैयक्तिकता में परिणत करना ही काव्य है। ऐसी कला सबको मोहित कर देती है और सबको लुभाती भी है। तब कवि की वैयक्तिक अनुभूति, सामाजिक अनुभूति का रूप धारण कर लेती है। ऐसा काव्य सामान्य से असामान्य और साधारण से असाधारण बन जाता है। कविता के माध्यम से ही समाज में विद्यमान सुख-दुःख, आनंद-क्लेश, क्रोध-करुणा अच्छी तरह से अभिव्यक्त हो जाती है; जिससे पाठक समरस हो जाता है। तभी कवि हृदय और पाठक हृदय की भावना का साधारणीकरण हो जाता है।

2.3.2.2 कविता का राजनीतिक क्षेत्र :

राजनीति कविता का अनिवार्य अंग है। काव्य के समस्त बौद्धिक तत्त्व रचयिता के बौद्धिक पक्ष की अभिव्यक्ति का सूचक है। कवि राजनीतिक विचारधारा का समर्थन करता है या किसी विचारधारा का खंडन-मंडन भी करता है। यह बात कवि के ज्ञान, अनुभव एवं चिंतन पर निर्भर करती है। कवि चाहे किसी भी चरित्र को भावनाओं एवं अनुभूतियों से चित्रित करें, लेकिन उसमें उसके निजी व्यक्तित्व की झलक विद्यमान रहती है। कवि के मन-मस्तिष्क पर राजनीतिक चिंतन की गहरी छाप हो तो वह अपनी कविता में राजनीतिक विचारों की पहल करता है। ऐसी पहल के माध्यम से कवि का राजनीतिक दृष्टिकोण अभिव्यक्त होता है; जो तत्कालीन समाज में राजनीतिक विचारधारा को पिरोने का कार्य करता है। ऐसे विचार ही समाज में राजनीतिक तख्त को पलट देते हैं, सत्ता को उथल-पुथल कर देते हैं। राजनीतिक व्यक्ति पर ही कविता का महत्त्व या प्रचार-प्रसार निर्भर करता है। हमारा इतिहास इस बात का गवाह है कि अनेक राजा-महाराजाओं द्वारा साहित्य को अपने जीवन का अभिन्न अंग माना। इतना ही नहीं, अनेक राजाओं के राज्य में आश्रयदाता कवि भी हुआ करते थे। यही कवि राजा के मन-मस्तिष्क को स्वस्थ बनाने का कार्य करते थे, राजा को कर्तव्य के प्रति सजग करते थे। शुरुआत में लोग रामराज्य का सपना लेकर राजनीति में आते थे, लेकिन आज स्वार्थसिद्धि हेतु राजनीति में आने लगे हैं। राजनीति में सत्ता-लिप्सा का खेल खेला जाता है, अधिकारों का गलत इस्तेमाल किया जाता है, नीति-अनीति, सही-गलत, अच्छा-बुरा, धर्म-अधर्म आदि सभी के परे जाकर सत्ता हाथियाने का षड्यंत्र किया जाता है। राजनीति में आ रही यह अनैतिक प्रवृत्ति आधुनिक विकृति की देन है; जिसने भारतीय प्रजातंत्र पर ही सवाल खड़ा किया है। ऐसी स्थिति में कवि हृदय राजनीतिक षड्यंत्र, दलबदलू वृत्ति, सत्ता-प्राप्ति की होड़, जाति-बिरादरी की राजनीति जैसे अनैतिक प्रवृत्तियों को देखकर आंदोलित हो उठता है। कवि हर हालत में अपनी कविता के माध्यम से राजनीतिक मूल्य बचाए रखने और उसका प्रचार-प्रसार करने का कार्य करता है। राष्ट्र के विकास में राजनीति साधक बनने के बाजय बाधक बन जाती है, तो अनेक मुसीबतें उस राष्ट्र के सामने खड़ी होती है।

अरस्तू के अनुसार मनुष्य एक राजनीतिक प्राणी है और हम जिस युग में रह रहे हैं वह राजनीतिक युग है। राजनीति की व्याप्ति का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि विज्ञान, साहित्य, धर्म, उद्योग, नीति, कूटनीति आदि क्षेत्रों तथा व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र तथा विश्वजनीन संबंधों में राजनीति की पेर हो गई है। राजनीति की इसी पेर से हमारा साहित्य भी अछूता नहीं रहा है। कविता व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र या विश्वजनीन राजनीतिक संबंधों को दृढ़ करती है। राजनीतिक दाँवपेच, सत्ता एवं धन की लालसा में सही और गलत की समस्त सीमाओं को

लाँघकर उसका सारा खेल स्वार्थकेंद्रित दिखाई देने लगा है। कविता इसी खेल को मानव मस्तिष्क से दूर कर देती है और आदर्श राजनीतिक मूल्यों की स्थापना कर देती है। यही मूल्य समाज और राजनेता की मानसिकता को स्वस्थ बना देते हैं। आधुनिक काल के कवि बाबा नार्गाजुन इसका सशक्त उदाहरण है। उन्होंने जनविरोधी बातों का खुलेआम विरोध किया। उनकी कविता शोषित, पीड़ित जनता की आवाज थी। यही वजह है कि उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा। उन्हें जो बात अच्छी लगती वे उसी राजनेता के साथ खड़े होते थे, लेकिन जहाँ जनविरोधी बात आती है, वहाँ वे उसका भारी विरोध करते थे।

2.3.2.3 कविता का सांस्कृतिक क्षेत्र :

वस्तुत: संस्कृति एक जीवन की विधि है और एक जीवन जीने की पद्धति भी। हम खाना खाते हैं, कपड़े पहनते हैं, भगवान की पूजा-अर्चना करते हैं, उत्सव-पर्व-त्योहार मनाते हैं, भाषा बोलते हैं, ये सारे संस्कृति के अंग है। संस्कृति उस विधि का नाम है; जिसके आधार पर हम सोचते हैं और कार्य करते हैं। कवि के सोच-विचार और कर्म पर संस्कृति का गहरा प्रभाव रहता है। यही प्रभाव या भावनाओं का प्रबल आवेग कविता के माध्यम से अभिव्यक्ति पाता है। किसी भी समाज में गहराई तक व्याप्त गुणों का दूसरा नाम संस्कृति है। वस्तुत: सत्य, शिव और सुंदर ये शाश्वत मूल्य कविता में संस्कृति के कारण ही आ जाते हैं। कविता इन्हीं मूल्यों का जतन करती है और प्रचार-प्रसार भी। काव्य कला मानव जीवन को सौंदर्य प्रदान करती है और सौंदर्यनुभूतिपरक मानव बना देती है, लेकिन सौंदर्य भी आखिरकार संस्कृति का ही हिस्सा है। कविता के सांस्कृतिक मूल्य मानव को नीतिवान बना देते हैं और दूसरे मानव के संपर्क में ला देते हैं और कविता, प्रेम, सहिष्णुता एवं शांति का पाठ पढ़ा देती है। मानव का जीने का एक ही तरीका है और वह है सत्य का मार्ग। संस्कृति वह गुण है; जो मनुष्य को मनुष्य बना देती है और कविता उसी मानवता की हिमायत करती है। काव्य का सांस्कृतिक पक्ष मनुष्य को जीवन जीने का अर्थ और जीवन जीने का तरीका सीखाता है। सामाजिक सदस्य के रूप में मनुष्य की सभी उपलब्धियाँ उसकी संस्कृति से अनुप्रणित होती है। कला, साहित्य, संगीत, वास्तु विज्ञान, शिल्प, कला, धर्म, दर्शन, विज्ञान आदि सांस्कृतिक प्रस्तुतिकरण के विभिन्न पहलू हैं। काव्य इसी सांस्कृतिक प्रस्तुतिकरण का नाम है। मनुष्य सिर्फ भोजन से नहीं जीता, बल्कि उसके लिए मन-मस्तिष्क या आत्मा की संतुष्टि भी जरूरी है। भौतिक उन्नति से शारीरिक भूख मिट सकती है, मगर मन और आत्मा भूखे ही रह जाते हैं। उसे संतृष्ट करने के लिए मनुष्य जो उन्नति करता है उसे संस्कृति कहा जाता है। मन और आत्मा की उन्नति का प्रबल आवेग काव्य के संस्कृतिक क्षेत्र में झलक उठता है। व्यक्ति की जिज्ञासा का परिणाम धर्म और दर्शन है। सौंदर्य की खोज में मनुष्य संगीत, मूर्ति, चित्र, साहित्य और वास्तु आदि कलाओं को उन्नत बना

देता है। इन्हीं कलाओं का सम्यक् दर्शन कविता के सांस्कृतिक पक्ष के अंतर्गत होता है। कवि की बाह्य और आंतरिक अनुभूति से प्राप्त व्यवहारों के तरीके संस्कृति से अंग बन जाते हैं। काव्य में अभिव्यक्त संस्कृति का मूल केंद्रबिंदु उन सूक्ष्म विचारों में समाहित है, जो एक समूह में ऐतिहासिक रूप से उनसे संबंद्ध मूल्योंसहित विवेचित होते रहते हैं। काव्य में वर्णित संस्कृति किसी समाज का वह सूक्ष्म संस्कार होती है; जिनके माध्यम से लोग परस्पर-संप्रेषण, विचार-विनयम, जीवनविषयक अभिवृत्तियों और ज्ञान को दिशा देते हैं। संस्कृति हमारे जीने और सोचने की विधि है। यही विधि काव्य में परिलक्षित होती रहती है। कविता में धार्मिक क्रिया-कलाप, मनोरंजन के साथ-साथ आनंद के तौर-तरीके भी शामिल होते हैं। काव्य में समाहित सांस्कृतिक क्षेत्र के दो पहलू हैं; इसमें पहला हमारी वेशभूषा, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज आदि से संबंध रखता है, तो दूसरा पक्ष विचारों, आदर्शों, भावनाओं और विश्वासों से संबंध रखता है। संस्कृति की व्याख्या हर समाज या राष्ट्र की दृष्टि से अलग-अलग होती है। दरअसल किसी भी राष्ट्र की सही पहचान वहाँ के लोगों की सांस्कृतिक परंपराओं और विशेषताओं से ही होती है। व्यक्ति को संस्कारित एवं परिष्कृत करना ही संस्कृति है। कविता में निहित यही संस्कृति व्यक्ति को सुसंस्कारित करती है। व्यक्ति के विभिन्न क्रिया-कलाप उस राष्ट्र की सांस्कृतिक पहचान कराते हैं। संस्कृति में व्यक्ति का रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज, वेशभूषा, उत्सव, पर्व, त्योहार आदि कथा-व्यथा रेखांकित रहती है। कविता तत्कालीन देशकाल की संस्कृति की परिचायक होती है। संस्कृति में हर समाज की जीवन पद्धति, रीति-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान, आचार-विचार, नया आविष्कार शामिल है, जिससे मनुष्य अमानवीय से मानवीय बन जाता है, असभ्य से सभ्य बन जाता है। यही सांस्कृतिक विचार कविता प्रचारित एवं प्रसारित करती रहती है।

2.3.2.4 कहानी का सामाजिक क्षेत्र :

कहानी विधा का ढांचा ही समाज, संस्कृति और राजनीति का नींव पर खड़ा होता है। कहानी में चित्रित समाज एक-दूसरे के प्रति स्नेह एवं सहृदयता का भाव रखता है, संस्कृति अपनी गौरवशाली परंपरा को रेखांकित करती है, तो राजनीति प्रजातंत्र को मजबूत करती है। सामाजिक क्षेत्र कहानी की बुनियाद है; जिसका चित्रण कई रूप में प्रस्तुत होता है। कहानी और समाज का घनिष्ठ संबंध है। कहानीकार समाज में जीता है और सामाजिक परिवेश से नए विषयों को ग्रहण कर स्वानुभूत अभिव्यक्ति देता है। परिणामत: समग्र समाज लाभान्वित होता है। कहानीकार अपनी कहानी के माध्यम से दुर्बल इकाइयों को लड़ने की प्रेरणा देता है। वह कहानी में व्यापक अनुभूति, गहरी संवेदना प्रतिबिंबित करता है। भारतीय समाजिक परिवेश में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। हमारी संयुक्त परिवार की परंपरा धीरे-धीरे एकल परिवार में तबदील हो गई। पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी

में संबंधों और मूल्यों का बदलता रूप कहानियों में चित्रित हो रहा है। आज की युवा पीढ़ी पुराने मूल्यों को त्याग कर नए जीवनमूल्यों का सर्जन कर रही है। इसी वजह से परिवार समाज से धीरे-धीरे कटता जा रहा है। मानवीय मूल्यों को त्यागकर स्वार्थ, लोभ, ईर्ष्या, मोह, माया का वरण हो रहा है। वर्तमान कहानी के समाजिक, नैतिक मापदंडों एवं मूल्यों के बदलते स्वरूप में इसकी स्पष्ट झलक दिखाई देती है। इन्हीं मूल्यों को बचना सामाजिक कहानीकारों के सामने एक बहुत बड़ी चुनौती है। सामाजिक बंधनों और सामाजिक शिष्टाचार के नियमों का पालन सामाजिक कहानी में होना चाहिए।

नए कहानीकारों ने एक ओर बदलते रिश्तों की कशमकश, अजनबीपन, उदासीनता, भय, बेगानापन, घुटन आदि सामाजिक समस्याओं को अपनी कहानी में सहारा दिया हैं, तो दूसरी ओर पुराने रिश्ते, प्राचीन परंपराओं, आदर्शों, नैतिक नीति-नियमों को तिलांजलि दी है। कहानीकार की भीतरी गहराई का दर्द स्वानुभूत होकर अभिव्यक्त होने लगा है। आज यह स्वानुभूति वैयक्तिकता छोड़कर प्रामाणिकता से निर्वैयक्तिक बन गई है।

कहानीकार समाज की संवेदना, परिवेश की वास्तविकता और टूटते-बिखरते संबंधों को बड़े सिद्दत के साथ व्यक्त कर रहे हैं। नए कहानीकारों ने समाज को नए दृष्टिकोण से देखा। पहले कहानी में कहानीकार व्यक्ति को समाज की दृष्टि से देखता था, वही आज की कहानी समूहगत सामाजिकता को व्यक्तिगत सामाजिकता के रूप में देखती है। शहरी समाज में इन्सान का व्यवहार आत्मकेंद्रित और यांत्रिक होता जा रहा है। अमानवीयता, संवेदनहीनता, नैतिक मूल्यों को तिलांजलि दी जा रही है, जिसका चित्रण वर्तमान कहानी पूरे सिद्दत के साथ कर रही है।

2.3.2.5 कहानी का राजनीतिक क्षेत्र :

हर देश की राजनीति और विकास का गहरा संबंध होता है। देश की राजनीति जितनी सकारात्मक और विवेकशील होती है, उतना ही देश का विकास अधिक होता है। जिस प्रकार भारतीय राजनीति ने अनेक करवटें ले ली, उसने अनेक पड़ावों को देखा, उसी प्रकार का वर्णन अनेक कहानीकारों ने अपनी कहानियों में किया। देश की राजनीति में अनेक क्रांतिकारी घटनाएँ हुई। कई महान राजनेताओं ने भारतीय राजनीति को नीतिमान बनाया और उसे जनसेवा का पर्याय बना दिया। परिणामस्वरूप राजनीति में उच्च मानवीय मूल्यों की स्थापना भी हुई। मानवतावाद, विश्वबंधुता, आध्यात्मवाद जैसे उच्च मानवीय मूल्यों से राजनीति के नए आयाम विकसित हुए। यही मूल्य तत्कालीन कहानी में दिखाई देते हैं। स्वातंत्र्योत्तरकालीन राजनीति इन सारे मूल्यों को तिलांजलि देते दिखाई देती है। इस काल की कहानी ने आम जन का भ्रमनिराश कर दिया। सत्ता पाने की होड़

में कई राजनेता अनैतिकता व्यवहार करने लगे। सत्ता को बरकरार रखने के लिए जगह-जगह विकृत राजनीति का दर्शन होने लगा। कुर्सी पाने की अदम्य लालासा एवं मोह ने सत्ताधारियों को अंधा बना दिया। सत्ताधारियों में दोगलापन, चुनावी षड्यंत्र, स्वार्थांधता, मनमानी, अन्याय, अत्याचार, अराजकता जैसी प्रवृत्तियाँ पनपने लगी। रचनाकार इन सारी प्रवृत्तियों को अनुभूत कर आहत हुआ। उनकी संवेदना जाग उठी और मनमानी व्यवहार करने वाले इन सत्ताधारियों पर अंकुश रखने के लिए कहानीकारों ने अपनी कलम चलाई। कई कहानीकारों ने सेवा के नाम पर मेवा खाने वाले राजनेताओं की पोलखोल दी। जनता ने जिनके हाथों में सत्ता के सूत्र दिए, उन्होंने नियमों एवं सिद्धांतों को तिलांजलि देना शुरू किया। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में पनपे भ्रष्टाचार, अनाचार, अनैतिकता के परिणामस्वरूप एक ऐसी पीढ़ी पैदा हुई कि जो सत्ताधारियों को मुँहतोड़ जवाब माँगने लगी। सत्ताधीशों के खिलाफ उठने वाली आवाज को बुलंद करने का प्रयास तत्कालीन कहानीकारों ने अपनी कहानियों के माध्यम से किया। इन कहानीकारों ने वर्तमान राजनीति का यथार्थ चेहरा समाज के सामने ला खडा कर दिया। पर इन कहानियों में राजनीति की इकहरी और यांत्रिक निष्कर्षों वाली सोच पैदा हुई दिखाई देती है; जिसमें वास्तविकता, अनुभव की प्रामाणिकता और परंपरा की अवहेलना नजर आती है।

2.3.2.6 कहानी का सांस्कृतिक क्षेत्र :

संस्कृति की जननी नारी आज अपने परंपरागत संस्कारों, मूल्यों एवं आदर्शों को त्यागकर अपने अस्तित्व एवं अस्मिता को तलाश रही है। मंदिर, पूजा-पाठ, रीति-रिवाजों, उत्सव, पर्व, त्योहारों में पनप रहे सांस्कृतिक मूल्य या संस्कार होटल, पब, क्लब, फैशन में सिमट गए हैं। आधुनिकता की अंधी दौड में भारतीय नारी समयाभाव के कारण अपने बच्चों को शिक्षा, संस्कार, मूल्य और आदर्श नहीं दे पा रही है; जिसके परिणामस्वरूप युवा पीढ़ी में मूल्यों एवं आदर्शों का अभाव पाया जाता है। इन सभी सांस्कृतिक मूल्यों की चिंता कहानी के केंद्र में दिखाई देती है। आज आधुनिकता के नाम पर विलुप्त हो रही मानवीय संवेदना, दो पीढ़ियों के बीच का मूल्य-संघर्ष, संयुक्त परिवारों का विघटन, टूटते-बिखरते दाम्पत्य संबंध, पाश्चात्य सभ्यता में कसमसाती भारतीय संस्कृति आदि का यथार्थ चित्रण कहानी में हो रहा है। कहानी के सांस्कृतिक परिवेश में मनुष्य अपने चिंतन; मनन और विवेक के आधार पर मूल्यों को ग्रहण करता है; जिसके द्वारा वह मानव कल्याण की कामना करता है और अपने आत्म-संस्कारों का विकास भी करता है। वह रूढ़िगत मूल्यों को तिलांजलि देता है और नए मूल्यों को अपनाता है। धर्म, दर्शन, कला, साहित्य, इतिहास तथा शिक्षा-दीक्षा, उत्सव-पर्व-त्योहार आदि मानव मूल्यों के उपादान है। ये सारे सांस्कृतिक मूल्य बचाना कहानीकारों के सामने एक बहुत बड़ी चुनौती है।

आज सांस्कृतिक विघटन के परिणामस्वरूप जगह-जगह नैतिक मूल्यों की गिरावट हो रही है। नतीजतन आम जन अपमान, निराशा, हताशा, दोगली नीति, अवहेलना के शिकार हो रहे हैं। कहानीकार इन्हीं प्रवृत्तियों को अपनी अनुभूति के द्वारा अपनी कहानी में अभिव्यक्त कर रहे हैं। सार यह कि संस्कृति में हर समाज की जीवन पद्धति, वेशभूषा, रीति-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान, आचार-विचार, उत्सव, पर्व और त्योहारों का नया आविष्कार शामिल है; जिससे मनुष्य मनुष्य बन जाता है। मानवता की हिमायत करने वाला यही सांस्कृतिक विचार कहानी का कथ्य है।

2.3.2.7 यात्रा वृत्तांत का सामाजिक क्षेत्र :

जिस प्रकार मानव जीवन के विविध क्षेत्र हैं, उसी प्रकार यात्रा वृत्तांत के भी विभिन्न क्षेत्र हैं। इनमें सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्र प्रधान है। जिस प्रकार फूल मालाओं में बिनने के बाद सुंदर फूलमाला बन जाती है, उसी प्रकार सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्र बिनने के बाद सुंदर यात्रा साहित्य का जन्म हो जाता है। यात्रा साहित्य में ये विभिन्न क्षेत्र पाठकों को सच्चाई की अनुभूति देते हैं। यात्रा साहित्य के सामाजिक क्षेत्र का वर्णन कई रूपों में प्रस्तुत होता है।

यात्रा वृत्तांत लेखन में सिर्फ यात्राओं का अंकन नहीं होता, बल्कि वह प्रकृति-संस्कृति के साथ-साथ समाज का भी चित्रण होता है। यात्रा वृत्तकार सायास-अनायास विभिन्न देशों के विभिन्न सामाजिक परिवेश का अंकन करता है। यात्रा साहित्य से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भारतीय और पाश्चात्य समाज में सुख-दुःख के प्रसंगों में साझेदार बनने के मापदंड भी अलग-अलग हैं। लेखक यात्रा साहित्य में सामाजिक परिवेश, आचार-विचार और व्यवहार को अभिव्यक्त कर सामाजिक पद्धतियों का रेखांकन करता है और यात्रा स्थानों के समाज का निरीक्षण-परीक्षण के साथ अपने समाज से तुलना भी करता है। वहाँ के समाज की आशा-आकांक्षा, रुचि-अरुचि, उन्नति-अवनति तथा हर्ष-विषाद का दर्शन कराता है और यात्रा स्थानों की सामाजिक विशेषताओं पर प्रकाश डालता है। यात्रा वृत्तांत लेखक यात्रा साहित्य में भावुकता, स्वाभाविकता, शालीनता, सहजता, हर्ष, प्रेम, करुणा, मैत्री, सभ्यता, संस्कृति, भाषा आदि सामाजिक पहलुओं का चित्रण करता है।

यात्रा साहित्य में प्राकृतिक अनुपम सौंदर्य के मिलाफ से समाजिक परिवेश का प्रस्तुतिकरण अत्यंत सूक्ष्म एवं प्रभावोत्पादक ढंग से किया जाता है। समाज में प्रचलित रूढ़ि-परंपरा, रीति-रिवाज, अलग-अलग प्रथाएँ जब समय के साथ बदल जाती है, तब समाज में आम जन का जीवन दुभर बन जाता है। आम जन सामाजिक परिवर्तन के साथ परिवर्तित नहीं हो पाते। इसी कारण जब व्यक्ति और समाज के बीच संघर्ष शुरू हो जाता है, तब समाज में अव्यवस्था जन्म लेती है। इसी अव्यवस्था

का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष परिणाम व्यक्तिगत आचार-विचार, पारिवारिक जीवन और सामाजिक व्यवहार पर होता है। पुरानी रूढ़ि-परंपरा, जाति-पाँति, भेदभाव, धार्मिक बंधन, कुरीतियाँ जब आम जन के मार्ग में रोडा बन जाते हैं, तब संवेदनशील यात्रा वृत्तांतकार इन सारी कुरीतियों, कमियों, खामियों और सड़ी-गली व्यवस्था की पोल खोल देता है। इस सामाजिक अव्यवस्था को सुव्यवस्था में तबदील करने के लिए लेखक अपनी मर्मभेदी लेखनी के माध्यम से निरंतर प्रहार करता रहता है, ताकि स्वस्थ समाज का निर्माण हो सके। हर देश के समाज में दो वर्ग नजर आते हैं-उच्च वर्ग और निम्न वर्ग। उच्च वर्ग हमेशा ऐय्याशी जीवन जीता है, तो निम्न वर्ग दो वक्त की रोटी के लिए मोहताज हो जाता है। ऐसी स्थिति में यात्रा वृत्तांतकार समाज के उच्च वर्ग के ऐय्याशी की पोल खोल देता है और निम्न वर्ग की कथा-व्यथा अंकित कर देता है। यात्रा साहित्य में सामाजिक परिवेश का यथार्थ चित्रण पाठक को सोचने और विचार करने के लिए बाध्य कर देता है और सामाजिक परिवर्तन की, हिमायत की भी मांग करता है।

2.3.2.8 यात्रा वृत्तांत का राजनीतिक क्षेत्र :

यात्रा वृत्तांत और राजनीति का गहरा रिश्ता है। ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। आदिकालीन यात्रा साहित्य में राजाओं की वीरता के साथ-साथ राजनीति का वर्णन दिखाई देता है। पल-पल बदलती राजनीति यात्रा साहित्य विधा पर अमिट छाप छोड़ देती है। पहले दोनों लोकमंगल की भावना से प्रेरित थे। समाज को खुशहाल बनाने और उसे आनंद में डूबो देने की कोशिश अपने-अपने ढंग और साधनों से दोनों ही करते हैं। राजनीति अपने कार्यक्रमों और नीतियों को प्रस्तुत करती है और सत्ता हाथियाने के लिए संघर्षरत रहती है, लेकिन यात्रा साहित्य सत्ता के लिए संघर्ष नहीं करता। वह वास्तविक जीवन को देखता है, भोगता है, अनुभव प्राप्त करता है और जनता की वकालात करता है। इतना ही नहीं, वह जनता की खुशियों और तकलीफों को वाणी देता है, अन्याय के खिलाफ आवाज बुलंद कर देता है और न्याय की गुहार लगाता है। यात्रा लेखक प्रकृति, संस्कृति, समाज और समाज की राजनीति को कलात्मक बिम्बों के सहारे सर्जित करता है। यात्रा साहित्य विचारधारात्मक अधिरचना का अंग होता है, बल्कि राजनीति वर्ग-संघर्ष, सत्ता-प्राप्ति के लिए किए जाने वाले संघर्ष का प्रत्यक्ष रूप। जिन यात्रा स्थानों का समाज अच्छा होता है, वहाँ की राजनीति भी अच्छी होती है। यात्रा साहित्य और राजनीति दोनों गतिशील-प्रगतिशील और प्रतिक्रियावादी होते हैं। यात्रा साहित्य और राजनीति तभी शुभ होते हैं, जब वे लोकमंगल के रास्ते पर अग्रसर होते हैं। समाज को निराशाजन्य अंधकार से निकालकर आनंद की रोशनी में नहालाने का काम यदि यात्रा साहित्य और राजनीति के द्वारा संपन्न होता है, तो यही स्थिति समाज के लिए मंगलदायक होती है। यदि राजनीति षड्यंत्रकारी हो तो इतिहास इस बात का गवाह है कि राजनीति के कारण ही राजा

राम को भी अपना राज्य छोड़ना पड़ा था। राजनीति के कारण यात्रा साहित्य में अनेक बदलाव दिखाई देते हैं। यात्रा साहित्यकार अपने समय की राजनीतिक भावनाओं और मान्यताओं का अध्ययन जरूर करता रहता है। यदि राजनीति समाज पर हावी होती है, मनमानी करने लगती है और अमानवीय व्यवहार करने लगती है, तो यात्रा साहित्यकार अपनी लेखनी की ताकत से समाज का साथ देता है। राजनीतिक यात्राओं से तात्पर्य केवल उन यात्राओं से है कि जो दो भिन्न भाषा-भाषी समाज राजनीतिक मसले सुलझाने, राजनीतिक संबंध ठीक करने, राजनीतिक फैसले करने के लिए एकसाथ आते हैं और उन मसलों को हल करते हैं। यात्रा साहित्यकार अपनी यात्रा के दौरान विदेशी राजनीति और देशी राजनीति की तुलना करते हुए अच्छाई का समर्थन करता है और बुराई का विरोध करता है। देश की राजनीति यदि आम जन पर अन्याय कर रही है तो यात्रा साहित्यकार उसके पक्ष में खड़ा हो ठाकता है।

2.3.2.9 यात्रा वृत्तांत का सांस्कृतिक क्षेत्र :

वस्तुत: संस्कृति मनुष्य की अमूल्य निधि है। हर देश की अपनी-अपनी संस्कृति होती है। लेकिन कुछ देशों के कई सांस्कृतिक पहलू मिलते-जुलते होते हैं, तो कुछ बिल्कुल भिन्न होते हैं। यात्रा साहित्य से सिर्फ यात्रा के प्राकृतिक अनुभव ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक माहौल जानने-पहचाने का सुअवसर मिल जाता है। किसी भी देश की संस्कृति को जानने-पहचाने और उसका अध्ययन-अध्यापन करने के लिए सांस्कृतिक यात्राओं का आयोजन किया जाता है। यात्रा साहित्य से यात्रा स्थानों के सांस्कृतिक पहलुओं का आदान-प्रदान होता है। दो राष्ट्रों की संस्कृति का तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए भी विभिन्न यात्राओं का आयोजन किया जाता है।

भारतीय संस्कृति में एक-दूसरे के सुख-दुःख में साझेदार बनना 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना का परिचयाक है। भारतीय संस्कृति मानवीय संवेदना एवं मानवता की परिचायक है। दो भिन्न भाषा-भाषी समाज की संस्कृति एक-दूसरे को जानने-पहचाने का सुअवसर यात्रा साहित्य से आसानी से मिल जाता है। यात्रा साहित्यकार अपने यात्रा साहित्य में वेशभूषा, रूढ़ि-परंपरा, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज, उत्सव, पर्व, त्योहार आदि सांस्कृतिक पहलुओं का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है। भारत में यात्रियों की कभी कमी नहीं रही। नतीजतन तिब्बत, चीन, मलाया, बर्मा आदि सुदूरवर्ती द्वीपों में भारतीय संस्कृति की गूँज सुनाई पड़ती है। यह गूँज यात्रा साहित्य में लिपिबद्ध होने से भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार सबदूर हो चुका है। यात्रा साहित्य में लेखक अपने देश, गाँव की सभ्यता, रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा के तौर-तरीके, अतिथ्य-सत्कार की परंपराएँ आदि का यात्रा स्थानों की संस्कृति से तुलना करता रहता है और सांस्कृतिक विरासत का प्रभाव रेखांकित

करता रहता है। लेखक का अपनी संस्कृति, सांस्कृतिक धरोहर और सामाजिक जड़ों के प्रति गहरा लगाव रहता है। यही गहरा लगाव वह अपने यात्रा वृत्तांत में आकलन से, संवादों से और सौंदर्य प्रत्ययों से विवेकशील अस्मिता के साथ प्रकट करता है। लेखक की संस्कृति विषयक सोच विस्तृत, उदार और गहरी होने पर दो देशों के बीच के संबंधों में मजबूती आ जाती है। इससे दोनों संस्कृतियाँ एक-दूसरे का आदर-सत्कार करने लगती है। यात्रा वृत्तांत में लेखक रीति-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान, रूढ़ि-परंपराओं को कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है और विचार-चिंतन से अलग ही रंग भर देता है। संस्कृति एक ऐसा पर्यावरण है; जिसमें रहते हुए व्यक्ति सामाजिक प्राणी बन जाता है और प्रकृति को अपने अनुकूल बनाने की कोशिश करता है। यही संस्कृति एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति से और एक समूह को दूसरे समूह से और एक समाज को दूसरे समाज से अलग कर देती है। यात्रा वृत्तांतकार इसी सांस्कृतिक पर्यावरण को अंकित करता है। मानव को जितनी मानवीय परिस्थितियाँ प्रभावित करती है, उन सभी की संपूर्णत: संस्कृति कहलाती है। लेखक यात्रा वृत्तांत में इन्हीं मानवीय परिस्थितियों को पूर्णरूपेन रेखांकित करता है।

लेखक ऐसी सांस्कृतिक व्यवस्था को यात्रा वृत्त में समेटता है; जिनमें जीवन के प्रतिमान, व्यवहार के तरीके, अनेकानेक भौतिक-अभौतिक प्रतिमान, परंपराएँ, विचारधारा, सामाजिक मूल्य, मानवीय क्रिया-प्रतिक्रियाएँ और आविष्कार शामिल होते हैं। मानव जीवन के दिन-प्रतिदिन के आचार-विचार, जीवन शैली, कार्य-व्यवहार, संस्कार, नीतिगत कार्य-कलाप, दार्शनिकता, कलात्मकता, स्थापत्य कला, संगीतात्मकता आदि सांस्कृतिक पहलुओं को यात्रा वृत्तांतकार यात्रा साहित्य में शब्द बद्ध कर देता है। सांस्कृतिक कला, विद्या और साहित्य से मनुष्य को जीवन जीने की प्रेरणा मिल जाती है। सार यह कि मनुष्य की सामाजिक विरासत या मनुष्य की संचित सृष्टि का नाम संस्कृति है। यात्रा साहित्य के सांस्कृतिक पक्ष में यात्रा साहित्यकार एक ओर मनुष्य के आचार-विचार, भावना, मूल्य, विश्वास, मान्यता, चेतना, प्रेरणा, भाषा, ज्ञान, कर्म, धर्म आदि अमूर्त तत्त्व को मूर्त रूप देता है, तो दूसरी ओर वहाँ खान-पान, वेशभूषा, रहन-सहन, मानव जीवन की पद्धतियाँ और भौतिक जन-जीवन की सभ्यताओं को भी अपनाता है। दरअसल यात्रा वृत्तांत से सांस्कृतिक आदान-प्रदान होता है और वैश्विक स्तर पर मानवीय संबंध दृढ़ होते हैं।

2.4 सारांश

1) कविता लेखन में भाव या विचार कार्यरत होते हैं। ये कविता में ही अंतर्निहित होते हैं। कविता में भाव, बुद्धि, कल्पना और शैली का कलापूर्ण समन्वय होता है। भाव ही कवि कल्पना का प्रेरक तत्त्व है, जो कवि कल्पना को साक्षात् करता है।

2) मानव जीवन में मानवता या मानवीय मूल्य सर्वोपरि होते हैं। यही मूल्य सार्थक एवं सारवान होते हैं; जो कि साहित्य या काव्य के केंद्र में निहित होते हैं। मानवीय मूल्य ही साहित्य के माध्यम से समाज में विवेक पैदा करने की दृष्टि से सहायक होते हैं। इन्हीं मानवीय मूल्यों को बचाने या उसका प्रचार-प्रसार करने की दृष्टि से काव्य महत्त्व रखता है। आखिरकार साहित्य की उपयोगिता इन्सान को इन्सान बनाने में ही तो है।

3) कहानी संक्षिप्त आकार का ऐसा आख्यान है; जो पाठकों पर भावपूर्ण प्रभाव डाल सके। यह मानव जीवन के किसी एक पक्ष, प्रसंग या घटना का संवेदनात्मक चित्रण है। यह घटना या प्रसंग मौलिक जगत् या मानसिक जगत् से उठते हैं और कहानी के माध्यम से आकार लेते हैं।

4) कहानी मानसिक रहस्य को खोलती है, जीवन के मार्मिक पक्षों का उद्घाटन करती है, जीवन के सत्य साक्षात् करती है, मानव चरित्रों का उद्घाटन करती है, जीवन की विभिन्न समस्याओं को उठाती है और उसका समाधान भी प्रस्तुत करती है। इन सभी तथ्यों की दृष्टि से कहानी का साहित्यिक महत्त्व तथा उपयोगिता अनिवार्य रूप में स्वीकारनी पड़ती है।

5) देश-विदेश में घटित घटना, देखे दृश्य, प्राप्त अनुभूतियों का वृत्तांत लिखना ही यात्रा वृत्तांत है। इसमें कल्पना के बजाय यथार्थ को स्थान दिया जाता है। सौंदर्यबोध की तलाश में मनुष्य उत्साह भाव से प्रेरित होकर जब यात्रा करता है, तब उसका मुक्त भाव से रेखांकन होता है। यात्रा वृत्तांतकार यात्रा स्थानों से ग्रहण किए गए प्रेम, सौंदर्य, भाषा, यादें और जीवन के खट्टे-मिट्टे अनुभव अपनी रचना में साझा करते हैं; जो यात्रा साहित्य नाम से जाने जाते हैं।

6) यात्रा साहित्य मनुष्य की मानवता को फलने-फूलने का अवसर जरूर देती है। धर्म एवं संस्कृति के प्रचार-प्रसारक, ऋषि-मुनि, साधु-संत तथा आचार्यों ने भी यात्राएँ की और वे संस्कृति के संवाहक रहें। आखिरकार यात्रा-साहित्य से पाठक एक-दूसरे की संस्कृति से परिचित हो जाते हैं। इतना ही नहीं, वे प्रकृति का मनोहारी चित्रण पढ़कर चेतनामयी एवं आनंददायी बन जाते हैं।

7) यात्रा के बाद अपने समृद्ध अनुभव लेखन के माध्यम से शब्दबद्ध कर लेखक दूसरों को बाँटता है, दूसरों की जिज्ञासा एवं कौतुहल को संतुष्ट कर देता है। जब ये अनुभव यात्रा वृत्तांत का आकार लेते हैं, तब वे दूसरे यात्री के लिए दिशादर्शक बन जाते हैं।

8) साहित्य ही समाज को सत्य, शिव और सुंदरता से युक्त सुसंस्कृत बनने की प्रेरणा देता है। प्रेरणा की दृष्टि से या प्रबल आवेग पैदा करने की दृष्टि से समाज और काव्य अर्थात् साहित्य का अन्योन्याश्रित संबंध रहा है। कोई भी कवि अपने सामाजिक दायित्व से मुँह मोड़ नहीं सकता है। इसलिए समाज के अच्छे और बुरे पहलू; जो कवि ने अनुभव किए हैं, वही कविता का विषय बन जाते हैं। जब तक कविता का सामाजीकरण और साधारणीकरण नहीं होता, तब तक कविता का मूल उद्देश्य सफल नहीं होता है।

9) कवि के मन-मस्तिष्क पर राजनीतिक चिंतन की गहरी छाप हो, तो वह अपनी कविता में राजनीतिक विचारों की पहल करता है। ऐसी पहल के माध्यम से कवि का राजनीतिक दृष्टिकोण अभिव्यक्त होता है; जो तत्कालीन समाज में राजनीतिक विचारधारा को पिरोने का कार्य करता है। ऐसे विचार ही समाज में राजनीतिक तख्त को पलट देते हैं, सत्ता को उथल-पुथल कर देते हैं।

10) कविता के सांस्कृतिक पक्ष में व्यक्ति का रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज, वेशभूषा, उत्सव, पर्व, त्योहार आदि की कथा-व्यथा को रेखांकित किया जाता है। कविता तत्कालीन देशकाल की संस्कृति की परिचायक होती है। कविता की संस्कृति में हर समाज की जीवन पद्धति, रीति-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान, आचार-विचार, नए आविष्कार शामिल होते हैं, जिससे मनुष्य अमानवीय से मानवीय बन जाता है, असभ्य से सभ्य बन जाता है। यही सांस्कृतिक विचार कविता प्रचारित एवं प्रसारित करती रहती है।

11) आज की युवा पीढ़ी पुराने मूल्यों को त्याग कर नए जीवन मूल्यों का सर्जन कर रही है। इसी वजह से परिवार समाज से धीरे-धीरे कटता जा रहा है। अत: मानवीय मूल्यों को त्यागकर स्वार्थ, लोभ, ईर्ष्या, मोह, माया का वरण हो रहा है। वर्तमान कहानी में सामाजिक, नैतिक मापदंडों एवं मूल्यों के बदलते स्वरूप की स्पष्ट झलक दिखाई देती है। इन्हीं मूल्यों को बचना सामाजिक कहानीकारों के सामने बहुत बड़ी चुनौती है। सामाजिक बंधनों और सामाजिक शिष्टाचार के नियमों का पालन कर सामाजिक कहानीकर इसी चुनौती का सामना कर रहे हैं।

12) आज कहानीकार सत्ताधारियों का दोगलापन, चुनावी षड्यंत्र, स्वार्थांधता, मनमानी, अन्याय, अत्याचार, अराजकता जैसी प्रवृत्तियों पर अपनी कहानी में प्रहार करने लगा है। रचनाकार इन सारी प्रवृत्तियों को अनुभूत कर आहत होता है, जिससे उनकी संवेदना जाग उठती है और मनमानी व्यवहार करने वाले इन सत्ताधारियों पर अंकुश रखने के लिए इन्हीं

कहानीकारों की कलम उठने लगी है। कई कहानीकारों ने सेवा के नाम पर मेवा खाने वाले राजनेताओं की भी भरसक पोल खोल दी है।

13) आज सांस्कृतिक विघटन के परिणामस्वरूप जगह-जगह नैतिक मूल्यों में गिरावट आ रही है। नतीजतन आम जन अपमान, निराशा, हताशा, दोगली नीति, अवहेलना के शिकार हो रहे हैं। कहानीकार इन्हीं प्रवृत्तियों को अपनी अनुभूति के द्वारा अपनी कहानी में अभिव्यक्त कर रहा है।

14) यात्रा साहित्य में सामाजिक परिवेश का यथार्थ चित्रण पाठक को सोचने और विचार करने के लिए बाध्य कर देता है और सामाजिक परिवर्तन की हिमायत भी करता है।

15) यात्रा साहित्यकार अपनी यात्रा के दौरान विदेशी राजनीति और देशी राजनीति की तुलना करते हुए अच्छाई का समर्थन करता है और बुराई का विरोध करता है। देश की राजनीति यदि आम जन पर अन्याय कर रही है, तो यात्रा साहित्यकार उसके पक्ष में खड़ा होता है।

16) यात्रा साहित्य के सांस्कृतिक पक्ष में यात्रा साहित्यकार एक ओर मनुष्य के आचार-विचार, भावना, मूल्य, विश्वास, मान्यता, चेतना, प्रेरणा, भाषा, ज्ञान, कर्म, धर्म आदि अमूर्त तत्त्व को मूर्त रूप देता है, तो दूसरी ओर वहाँ खान-पान, वेशभूषा, रहन-सहन, मानव जीवन की पद्धति और भौतिक जन-जीवन की सभ्यता को भी अंकित करता है। दरअसल यात्रा वृत्तांत से सांस्कृतिक आदान-प्रदान होता है और उससे वैश्विक स्तर पर मानवीय संबंध और भी दृढ़ होते हैं।

2.5 पारिभाषिक शब्द और शब्दार्थ

1. **घुमक्कड** : बहुत अधिक घूमनेवाला, रमंता।
2. **वाङ्मय** : साहित्य।
3. **साधारणीकरण** : साधारण रूप में लाना, रस निष्पत्ति की तादाम्यपरक स्थिति।
4. **तादात्म** : तल्लीनता, एक जान होना।
5. **यात्रा वृत्तांत** : यात्रा का वृत्तांत।
6. **कहानी** : मनगढंत बात, कथा।
7. **काव्य** : कविता, कवि की रसात्मक रचना।
8. **परिहास** : जोर की हँसी, हँसी-मजाक।

2.6 स्वयं–अध्ययन के लिए प्रश्न

1. अंग्रेजी में साहित्य के लिए प्रचलित Literature शब्द ..... धातु से बना है।

   (अ) अक्षर (ब) शब्द (क) लेटर (ड) लिट्आ

2. विलियम शेक्सपियर के अनुसार कवि ..... ही आखिरकार अज्ञात वस्तुओं और विचारों को आकार देती है।

   (अ) कल्पना (ब) भावना (क) बुद्धि (ड) प्रतिभा

3. कवि हृदय में ..... का प्रबल आवेग ही कविता निर्मिति का प्रधान कारण है।

   (अ) भावना (ब) कल्पना (क) प्रतिभा (ड) बुद्धि

4. कॉलरिज ..... को उत्तमोत्तम शब्दों का उत्तमोत्तम क्रमविधान मानते हैं।

   (अ) कविता (ब) कहानी (क) यात्रा वृत्तांत (ड) रेखाचित्र

5. पंडितराज जगन्नाथ रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करने वाले ..... को काव्य कहते हैं।

   (अ) शब्द (ब) वाक्य (क) पद (ड) ध्वनि

6. सिंगमंड फ्रायड ..... का संबंध मानव मन की कुंठाओं से जोड़ते हैं।

   (अ) काव्य (ब) कहानी (क) यात्रा वृत्तांत (ड) रेखाचित्र

7. आचार्य विश्वनाथ रसयुक्त ..... को काव्य मानते हैं।

   (अ) शब्द (ब) वाक्य (क) पद (ड) ध्वनि

8. ..... 'सबसे उत्तम कहानी वह होती है; जो किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर आधारित हो।

   (अ) मुंशी प्रेमचंद (ब) जैनेंद्र (क) अज्ञेय (ड) इलाचंद जोशी

9. ..... के अनुसार 'कहानी एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को लेकर लिखा हुआ नाटकीय आख्यान है।'

   (अ) श्यामसुंदर दास (ब) प्रेमचंद (क) प्रसाद (ड) पंत

10. ..... कहानी की प्रमुख विशेषता है।

    (अ) मनोवैज्ञानिकता (ब) वैज्ञानिकता (क) भावप्रवणता (ड) संप्रेषणीयता

11. चरित्र और कथानक में ..... होनी चाहिए।

(अ) स्वाभाविकता (ब) समन्वय (क) एकता (ड) क्रमबद्धता

12. कहानी में क्रमबद्धता के साथ ..... होनी चाहिए।

(अ) गतिशीलता (ब) प्रवाहमयता (क) श्रृंखलाबद्धता (ड) लय

13. महापंडित राहुल सांकृत्यायन यात्रा साहित्य पर ..... किताब लिखी।

(अ) घुमक्कड शास्त्र (क) मेरी तीर्थ यात्रा

(ब) वन यात्रा (ड) मेरी कैलाश यात्रा

14. महापंडित राहुल सांकृत्यायन के अनुसार ..... एक रस है।

(अ) घुमक्कडी (ब) शोक (क) श्रृंगार (ड) करुण

15. कठिन मार्गों को तय करने के बाद नए स्थानों पर पहुँचकर हृदय में ..... पैदा होता है।

(अ) भावोद्रेक (ब) विद्रोह (क) बवाल (ड) बवंडर

2.7 स्वयं–अध्ययन प्रश्नों के उत्तर।

1. *(क) लेटर*
2. *(अ) कल्पना*
3. *(अ) भावना*
4. *(अ) कविता*
5. *(अ) शब्द*
6. *(अ) काव्य*
7. *(ब) वाक्य*
8. *(अ) मुंशी प्रेमचंद*
9. *(अ) श्यामसुंदर दास*
10. *(अ) मनोवैज्ञानिकता*
11. *(अ) स्वाभाविकता*
12. *(अ) गतिशीलता*

13. *(अ) घुमक्कड शास्त्र*

14. *(अ) घुमक्कडी*

15. *(अ) भावोद्रेक*

2.8 स्वाध्याय

❑ दीर्घोत्तरी प्रश्न

1. कविता का स्वरूप स्पष्ट करते हुए उसके महत्त्व एवं उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।
2. कहानी का स्वरूप स्पष्ट करते हुए उसके महत्त्व एवं उपयोगिता का विवेचन कीजिए।
3. यात्रा वृत्तांत का स्वरूप स्पष्ट करते हुए उसके महत्त्व एवं उपयोगिता को अंकित कीजिए।
4. कविता के क्षेत्र पर प्रकाश डालिए।
5. कहानी के क्षेत्र का विवेचन कीजिए।
6. यात्रा वृत्तांत के क्षेत्र का परिचय दीजिए।

❑ टिप्पणियाँ

1. कविता का स्वरूप।
2. कहानी का स्वरूप।
3. यात्रा वृत्तांत का स्वरूप।
4. कविता : महत्त्व एवं उपयोगिता।
5. कहानी : महत्त्व एवं उपयोगिता।
6. यात्रा वृत्तांत : महत्त्व एवं उपयोगिता।
7. कविता का सामाजिक क्षेत्र।
8. कविता का राजनीतिक क्षेत्र।
9. कविता का सांस्कृतिक क्षेत्र।
10. कहानी का सामाजिक क्षेत्र।

11. कहानी का राजनीतिक क्षेत्र।

12. कहानी का सांस्कृतिक क्षेत्र।

13. यात्रा वृत्तांत का सामाजिक क्षेत्र।

14. यात्रा वृत्तांत का राजनीतिक क्षेत्र।

15. यात्रा वृत्तांत का सांस्कृतिक क्षेत्र।

2.9 क्षेत्रीय कार्य

1. किसी एक स्थान की यात्रा कर उसका वृत्तांत लिखिए।
2. जीवन की किसी एक अविस्मरणीय घटना पर कहानी लेखन कीजिए।
3. किसी एक विषय पर कविता लेखन कीजिए।

2.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

1. *''साहित्यिक विधाएँ : पुनर्विचार''*, डॉ. हरिमोहन।
2. *''यात्रा साहित्य परिवेश एवं परिप्रेक्ष्य''*, डॉ. प्रकाश मोकाशी।
3. *''साहित्यिक विधाएँ : सैद्धांतिक पक्ष''*, डॉ. मधु धवन।
4. *''भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र''*, डॉ. कृष्णदेव शर्मा।
5. *''मिडिया लेखन : सिद्धांत और व्यवहार''*, डॉ. चंद्रप्रकाश मिश्र।

❑ ❑ ❑

इकाई–3

रिपोर्ताज तथा साक्षात्कार लेखन

रिपोर्ताज के क्षेत्र–वाणिज्य, विज्ञान तथा तकनीकी
साक्षात्कार के क्षेत्र– साहित्य तथा सामाजिक

अनुक्रम

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 विषय–विवेचन

3.3.1 रिपोर्ताज लेखन

3.3.1.1 रिपोर्ताज लेखन – प्रस्तावना

3.3.1.2 रिपोर्ताज लेखन – स्वरूप

3.3.1.3 रिपोर्ताज लेखन – महत्त्व

3.3.1.4 रिपोर्ताज लेखन – उपयोगिता

3.3.1.5 रिपोर्ताज लेखन के क्षेत्र

3.3.1.6 वाणिज्य, विज्ञान तथा तकनीकी

3.3.2 साक्षात्कार लेखन

3.3.2.1 साक्षात्कार लेखन – प्रस्तावना

3.3.2.2 साक्षात्कारलेखन – स्वरूप

3.3.2.3 साक्षात्कारलेखन – महत्त्व

3.3.2.4 साक्षात्कार लेखन – उपयोगिता

3.3.2.5 साक्षात्कार लेखन के क्षेत्र

3.3.2.6 साहित्य तथा सामाजिक

3.4 स्वयं-अध्ययन के लिए प्रश्न

3.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ

3.6 स्वयं-अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

3.7 सारांश

3.8 स्वाध्याय

3.9 क्षेत्रीय कार्य

3.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- रिपोर्ताज का स्वरूप से परिचित होंगे।
- रिपोर्ताज का महत्त्व समझ पाएँगे।
- रिपोर्ताज की उपयोगिता से परिचित होंगे।
- रिपोर्ताज के क्षेत्रो से परिचित हो जाएँगे।
- साक्षात्कार का स्वरूप समझ पाएँगे।
- साक्षात्कार का महत्त्व समझ पाएँगे।
- साक्षात्कार की उपयोगिता से अवगत हो पाएँगे।
- साक्षात्कार के क्षेत्रों से परिचित हो जाएँगे।

3.2 प्रस्तावना

हिंदी गद्य साहित्य की नई विधाओं के रूप में रिपोर्ताज तथा साक्षात्कार विधा ने अपने लेखन द्वारा साहित्य के क्षेत्र में विशेष स्थान प्राप्त कर लिया है। ये दोनों भी विधाएँ कम समय में ही साहित्य के अंतर्गत लेखन विशेष से अपना स्थान कायम कर चुकी है। नि:संदेह हिंदी गद्य साहित्य में युगीन माँग बनकर रिपोर्ताज तथा साक्षात्कार लेखन ने कम समय में ही अपना विशेष स्थान प्राप्त कर लिया है।

3.3 विषय-विवेचन

इस इकाई के अंतर्गत आप रिपोर्ताज तथा साक्षात्कार लेखन का स्वरूप, महत्त्व तथा उपयोगिता से परिचित होंगे। साथ ही उनके निर्धारित क्षेत्रों से अवगत भी हो जाएँगे।

3.3.1 रिपोर्ताज लेखन

3.3.1.1 प्रस्तावना

रिपोर्ताज विधा पर सर्वप्रथम शास्त्रीय विवेचन श्री. शिवदान सिंह चौहान ने मार्च 1941 में प्रस्तुत किया। सुप्रसिद्ध आलोचक श्री. चौहान स्वयं अच्छे रिपोर्ताज लिखते थे। आपकी दृष्टि में 'आधुनिक जीवन की इस द्रुतगामी वास्तविकता में हस्तक्षेप करने के लिए मनुष्य को नई साहित्यिक रूप विधा को जन्म देना पडा। रिपार्ताज उनमें से सबसे प्रभावशाली और महत्त्वपूर्ण रूपविधान है। रिपोर्ताज में घटना-प्रधानता पर बल दिया जाता है। लेखक की घटना के साथ जितनी गहरी अनुभूति होगी, रचना उतनी ही श्रेष्ठ होगी। अनुभूति के अभाव में वह सतही व छिछली होती जाएगी, जिसकी ओर समर्थ साहित्यकारों को सतर्क किया।'

3.3.1.2 स्वरूप

'रिपोर्ताज' मूलत: पत्रकारिता के क्षेत्र से साहित्य में विकसित आधुनिक गद्य विधा है। कहा जाता है कि इसका अविर्भाव प्रथम विश्व युद्ध के समय ही हो चुका था। जब चर्चिल जैसे व्यक्ति संवाददाता बनकर भीषण मार-काट, भयानक रक्त-पात की ताजा रिपोर्ट सीधे युद्ध भूमि से भेज रहे थे। डॉ. हरदयाल का कथन है कि, ''रिपार्ताज का जन्म द्वितीय विश्व-युद्ध के समय हुआ। जब साहित्यकारों ने युद्ध-भूमि के दृश्यों और घटनाओं की रिपोर्ट समाचार पत्रो में दी। इन रिपोर्ट में पेशेवर पत्रकारों की रिपोर्ट से स्वाभाविक भिन्नता आ गई थी। यह भिन्नता इनकी साहित्यिकता, कलात्मकता और उस उत्साह में थी, जो युद्ध-भूमि पर उपस्थित साहित्यकार सैनिकों के हृदय में विद्यमान थे। इस प्रकार अनायास ही रिपोर्ताज का जन्म हो गया।

रिपोर्ताज मूलत: फ्रेंच भाषा का शब्द है। अंग्रेजी का रिर्पोटिंग शब्द हिंदी में रिपोर्ताज के रूप में प्रयुक्त होता है, परंतु रिपोर्ताज रिपोर्ट से भिन्न है। रिपोर्ट का आशय किसी घटना, खबर, आँखों देखे हाल का यथातथ्य वर्णन है, जिससे सारा विवरण दृश्यमान हो जाए। ठेठ हिंदी में इसे 'रपट लिखना' कहते हैं। जब किसी विषय का आँखों देखा वर्णन इतने कलात्मक, साहित्यिक और प्रभावशाली ढंग से किया जाता है कि उसकी अमीट छाप हृदय पटल पर अंकित हो जाती है, तब

उसे रिपोर्ताज की संज्ञा दी जाती है। रिपोर्ताज के रूप में किसी घटना का विवरण प्रस्तुत करते समय घटना के साथ परिवेश एवं पृष्ठभूमि को अधिक महत्व देकर उसे भावोत्तेजक रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

❑ परिभाषाएँ

डॉ. भगीरथ मिश्र ने रिपोर्ताज के स्वरूप के संबंध में लिखा है, ''किसी घटना या दृश्य का अत्यंत विवरणपूर्ण, सूक्ष्म, रोचक वर्णन इस प्रकार किया जाता है कि वह हमारी आँखों के सामने प्रत्यक्ष हो जाए और हम उससे प्रभावित हो उठे।'' डॉ. रामचंद्र तिवारी का कथन है कि ''जब सफल पत्रकार या साहित्यकार वास्तविक घटना को अपनी भावना में रंगकर बिंबधर्मी भाषा के माध्यम से सजीव बनाकर प्रस्तुत करता है, तब वह रिपोर्ताज की कला-सृष्टि करता है। हिंदी साहित्य कोश के अनुसार 'रिपोर्ट के कलात्मक और साहित्यिक रूप को ही रिपोर्ताज कहते हैं।'

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि यथार्थ की कलात्मक व्यंजना ही रिपोर्ताज है। रिपोर्ताज का संबंध वर्तमान से होता है। अत: ड्राईंग रूम में बैठकर घटना को कल्पना के सहारे प्रस्तुत करके रिपोर्ताज नहीं लिखा जा सकता। रिपोर्ताज में लेखक का घटना, स्थल पर उपस्थित रहना और आँखों देखी घटनाओं का वर्णन करना आवश्यक होता है। रिपोर्टरों ने अनुभव किया कि रिपोर्ट की कलात्मक प्रस्तुति अधिक ग्राह्य होती है। रिपोर्ताज के रूप में एक ऐसी स्वतंत्र विधा का विकास हुआ, जो संस्मरणात्मक होने पर भी सूचनात्मक नहीं होती और कथात्मक होने पर भी काल्पनिक नहीं होती।

3.3.1.3 महत्त्व

किसी भी घटना का मार्मिक वर्णन रिपोर्ताज का लक्ष्य होता है। युद्ध, अकाल तथा बाढ आदि मार्मिक घटनाएँ रिपोर्ताज के लिए सामग्री होती है। यह विधा दृष्टिसत्य को दूसरों के अनुभव तथ्य में परिणत करने में अग्रणी होती है। मनुष्य के प्रति सहज, सुलभ आकर्षण तथा पीडित मानवता के प्रति गहरी संवेदना की अभिव्यक्ति रिपोर्ताज का प्रधान कार्य है। रिपोर्ताज में प्रभावपूर्ण चित्रों के रूप में छोटी-छोटी घटनाओं को प्रस्तुत किया जाता है। सफल रिपोर्ताज के द्वारा प्रस्तुत घटनाएँ पाठक के मानस पटल पर पूरा चित्र प्रस्तुत कर देती है। चित्रपट की तरह घटना आँखों के सामने तेजी से घूम जाती है। भावों और संवेदना की तरंगों से युक्त घटना चित्रात्मकता के कारण सजीव बन जाती है। इस दृष्टि से रिपोर्ताज का महत्व माना जाता है।

3.3.1.4 उपयोगिता

रिपोर्ताज एक नई विधा के रूप में आज विद्यमान है। मीडिया के लिए इस विधा में बहुत सारी संभावनाएँ हैं। इसका कथा तत्त्व श्रोताओं को बाँधता है और नाटकीयता, रोचकता, उत्सुकता पैदा करता है। तथ्यपरकता इसे वर्तमान से जोडकर इतिहास का दस्तावेजी उद्घोषक बना देती है। इसमें कल्पना प्रसूत अभिव्यंजना होती है। परंतु तथ्यों पर आधारित होने के कारण यह प्रामाणिक रिपोर्ट भी है। इसका रिपोर्ट होना ही इसे अन्य विधाओं से अलग करता है। वैसे देखा जाए तो रिपोर्ताज लेखक की अपनी प्रविधि तथा विशेष तकनीक होती है। रिपोर्ताज लेखक की प्रविधि के बारे में डॉ. रामगोपाल सिंह चौहान लिखते हैं- रिपोर्ताज में यथातथ्यता की रक्षा करनी चाहिए। कारण रिपोर्ताज नितांत सत्य घटना को ही अपना वर्ण्य विषय बनाकर चलता है। लेखक अपनी भावनाओं के अनुरूप उस घटना में केवल रंग भर देता है। रिपोर्ताज में जो गुण या उसकी जो विशेषताएँ होती हैं उन पर विचार करते हुए डॉ. वीरपाल वर्मा लिखते हैं- साहित्य की वह प्राणवत्ता जो पाठक को निरंतर एक स्फूर्ति देती रहती है, वह जीवंतता कहलाती है। रिपोर्ताज जड एवं शुष्क घटना को अपनी साहित्यिक कला से चेतन एवं सरस बनाकर प्रस्तुत करता है। यही रिपोर्ताज की सजीवता, जीवंतता होती है। इस गुण या विशेषता के कारण ही रिपोर्ताज निष्प्राण नहीं लगता। रिपोर्ताज का सहज और सरल होना एक महत्वपूर्ण गुण माना जाता है। एक अच्छे रिपोर्ताज में फोटोग्राफी के साथ सब गुण होते हैं, यानी शब्दों के जरिए फोटोग्राफी, शब्द चित्र मात्र नहीं। शब्द चित्र में कूची की कला होती है। वहाँ मौलिकता तथ्य को नया रूप देती है। फोटोग्राफी में कैमरा बोलता है। तथ्य जो का त्यों रहता है, किंतु जिस कोन में धूपछांह की अभिव्यक्ति होती है, उससे लोग मुग्ध हो जाते हैं।

3.3.1.5 रिपोर्ताज लेखन के क्षेत्र

हिंदी गद्य साहित्य में रिपोर्ताज लेखन एक नई विधा के रूप में विद्यमान है। मिडिया की दृष्टि से इस विधा के अंतर्गत बहुत कुछ संभावनाएँ हैं। इसके कई क्षेत्र दृष्टिगत होते हैं, जिसका विवेचन करना प्रासंगिक लगता है।

3.3.1.6 वाणिज्य, विज्ञान तथा तकनीकी

इस विधा का विकास युरोप के युद्ध क्षेत्रों से हुआ। सन् 1936 के लगभग द्वितीय महायुद्ध के पूर्व इस विधा का जन्म विधिवत हुआ और यह विधा युद्ध भूमि में ही विकसित हुई। महायुद्ध की विभीषिकाएँ भी नवीन कला रूपों तथा साहित्यिक विधाओं को जन्म देती है। इलिया एहरन बुर्ग

के रूप में लिखे रिपोर्ताजों के साथ-साथ अमरिका, फ्रांस तथा इंग्लैंड में भी कई रिपोर्ताज लेखक हुए। इलिया के रिपोर्ताजों से मालूम होता है कि वह लाल फौज के साथ आगे बढ़ रहा है। डिकिन्स की पहली पुस्तक 'बॉज के स्केच' में लंदन की शाम और सुबह के अच्छे रेखाचित्रों में इस विधा के तत्त्व है। ग्रोसमन लेवस्का, शोलोखोव आदि प्रमुख लेखकों के उपन्यासों में भी इस विधा के बीज प्राप्त होते हैं। रूस की समाजवादी क्रांति का रिपोर्ताज 'टेन डेज दैट शुक द वर्ल्ड' में प्रस्तुत किया गया है। यह विधा रूसी साहित्य में सर्वाधिक लोकप्रिय हुई। अनेक सोविएत लेखकों ने साहित्य को अपने प्राणों से भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण समझा और दूसरे सिपाहियों की तरह वे अपने मोर्चे पर डटे रहे। कई लेखकों की जानें भी गई, परंतु इन लोगों ने रिपोर्ताज लिखे हैं। उनमें महायुद्ध का सजीव साहित्य और इतिहास दोनों हैं।

किसी भी घटना का इतिहास और उसका परिवेश तो लेखक के समक्ष ही है, पर रिपोर्ताज का रूप विधान ही उनको कला के रूप में प्रस्तुत करता है। रिपोर्ताज में घटना चित्रपट की तरह आँखों के सामने तेजी के साथ घूम जाती है। परिवेश की संपूर्ण चित्रात्मकता के साथ भावों और संवेदनाओं की तरंगों से युक्त घटना सजीव बन जाती है। अत: रेखाचित्र और रिपोर्ताज में भी पर्याप्त अंतर है।

रेडियो माध्यम समय सीमा में बंधा होता है। अत: रेडियो रिपोर्ताज लंबे या प्रदीर्घ नहीं होते हैं। उसका विस्तार सीमित अवधि में निवेदनपूर्ण हो सके इतना ही होता है। रिपोर्ताज का प्रसारण घटना स्थल से प्रत्यक्षदर्शी संवाददाता द्वारा रिपोर्ताज प्रस्तुत किये जाने की सूचना से प्रारंभ होता है। जोखिमभरे स्थलों से आँखों देखा हाल. घटनाओं का वर्णन करना बड़ा कठिन होता है। साथ ही वस्तुगत तथ्यों को प्रभावोत्पादक ढंग से प्रस्तुत करते समय उसमें कलात्मकता, संक्षिप्तता एवं रोचकता का होना अनिवार्य होता है। घटनाग्रस्त एवं घटना से जुडे लोगों से प्रत्यक्ष संवाद द्वारा तथ्यों को जुटाया जाना चाहिए।

रेडियो रिपोर्ताज का एक सामूहिक प्रभाव होता है। असंख्य श्रोता एक साथ प्रभावित होते हैं। अत: रिपोर्ताज लेखन में यथातथ्य प्रस्तुति, जीवंतता और नाटकीयता इन तीन तत्त्वों का ईमानदारी के साथ निर्वाह आवश्यक होता है।

रिपोर्ताज नितांत सत्य घटना को अपना वर्ण्य-विषय बनाकार चलता है। लेखक अपनी संवेदनाओं के अनुरूप उस घटना में रंग भरने का कार्य करता है। रिपोर्ताज लेखक को संतुलन और निष्पक्षता पर विशेष ध्यान देना पडता है। पढने में जीवंतता का अनुभव करानेवाले रिपोर्ताज अधिक सफल हाते हैं। रिपोर्ताजकार को जड एवं शुष्क घटना को अपनी साहित्यिक कला से चेतन एवं सरस

बनाकर प्रस्तुत करना पडता है, जिससे उसमें सजीवता आती है। रिपोर्ताज लेखन में नाटकीयता का समावेश भी अपेक्षित होता है। घटना से संबंधित पात्रों की मुख-मुद्रा, दृश्यों का चित्रण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि घटना श्रोता के सामने मूर्तिमान हो। इसलिए ध्वनि प्रभावों के माध्यम से नाटकीयता का समावेश किया जाना चाहिए।

3.3.2 साक्षात्कार लेखन

3.3.2.1 प्रस्तावना

हिंदी गद्य साहित्य की नई विधाओं में जिस विधा ने कम समय मे विशेष स्थान प्राप्त कर लिया है, वह साक्षात्कार विधा है। इस विधा के माध्यम से साहित्यकार, राजनीतिज्ञ, समाजसुधारक, कलाकार आदि के अंतरंग विचार सहज ही प्रकट हो जाते है। साक्षात्कार विधा में जिससे साक्षात्कार किया जा रहा है वह तो जनसामान्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण है ही पर साक्षात्कार लेनेवाला भेंटकर्ता भी कम महत्वपूर्ण नहीं होता। क्योंकि इस विधा के लिए अधिकांश आलोचकोने इंटरव्यू शब्द का प्रयोग किया। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य शब्द यत्र-तत्र प्रयोग में लाये जाते है, जिनमें से भेंट, भेंटवार्ता, चर्चा, बातचीत, मुलाकात, अंतरंग वार्ता आदि मुख्य है। सुप्रसिद्ध पत्रकार, साहित्यकार मनोहर श्याम जोशी ने बातों-बातों में पदबंद चलाया। इसी शीर्षक से उनके द्वारा लिए गए साक्षात्कारों का संकलन भी सन् 1983 में प्रकाशित हुआ। यह पदबंध दूरदर्शन में भी अपना लिया। जिसके अंतर्गत बिपिन हांडा द्वारा लिए गए साक्षात्कार काफी लोकप्रिय हुए।

3.3.2.2 स्वरूप

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह हमेशा अपने बारे में बताने तथा दूसरों के विषय में जानने की कोशिश करता है। यही उत्सुकता उसका स्वाभाविक गुण है। शायद इसी कारण भाषा का जन्म हुआ। साधारणत: देखा गया है कि किसी के बारे में जानने की जिज्ञासा का समाधान संवादात्मक शैली में होता है। वह शैली अधिकतर प्रश्नाश्रित होती है। जैसे कि 'आप कहाँ जा रहे हैं?', 'संभवत: आप कलकत्ता जायेंगे?', 'आपका नाम क्या है?', 'क्या आप ही अधिकारी महोदय है?', ''मुझे शिवप्रसाद से मिलना था?'' आदि। ज्यादातर देखा गया है कि सीधे वाक्य भी उच्चारण विधि से प्रश्नवाचक बन जाते हैं। आधुनिक युग सूचना-विस्फोट का युग है। रोज नई-नई जानकारियाँ प्राप्त होती हैं, व्यक्तितत्व उभरते हैं। इन खोजपूर्ण जानकारियों को जनता के समक्ष प्रस्तुत करने, उनसे संबंधित व्यक्तियों को जनता से परिचित कराने और उनकी कार्यशैली की जानकारीं देते हुए सम्प्रति साक्षात्कार (इंटरव्यू) विधि का प्रयोग आज खूब लोकप्रिय रहा है। 'साक्षात्कार' शब्द अंग्रेजी

'इंटरव्यू' शब्दार्थ के रूप में प्रयुक्त है। हिंदी में 'साक्षात्कार' शब्द का अभिप्राय होता है- साक्षात् कराना अथवा करना अर्थात् वह प्रक्रिया जो साक्षात करा दे। अब सवाल उठता है कि किसको और क्यों? साक्षात्कार अंग्रेजी शब्दार्थ इंटरव्यू से अधिक संवेदनशील शब्द है। उसके आधार पर.साक्षात्कार से अभिप्राय है- किसी के अंत के अंतस का अवलोकन करना अर्थात् जो बाहरी रूप में दिखाई नहीं देता हो और जिस प्रक्रिया द्वारा वह अदृश्य मूर्तिमान हो जाये, उसी को इंटरव्यू या साक्षात्कार कहते हैं। किसी भी मनुष्य को पहचानने, किसी कृतित्व को उभारने या किसी व्यक्ति अथवा कृति/ कार्य के अंतस को टटोलने हेतु प्रयुक्त प्राश्निक विधि को 'साक्षात्कार' अथवा 'इंटरव्यू' कहा जा सकता है।

आज के संदर्भो में साक्षात्कार के दो फलक दिखाई देते हैं- एक माध्यमोपयोगी, दूसरा प्रतियोगात्मक। हमारा अभिष्ट माध्यमोपयोगी साक्षात्कार है, परंतु सम्प्रति सामान्य जनजीवन में जीविकोपार्जन और शिक्षा के क्षेत्र में प्रतियोगितापरक लिखित परीक्षा के बाद अभ्यर्थी के व्यक्तित्व योग्यता, उपयोगिता, विश्वास, जीवनशैली, हाजिर जवाबी इत्यादी को जाँचने हेतु आयोजित साक्षात्कार प्रणाली अधिक विख्यात है। इसलिए इस पर बात कर लेना निरर्थक नहीं, बल्कि आवश्यक प्रतीत होता है।

❑ परिभाषाएँ

साक्षात्कार को प्रेस इंटरव्यू कहा जाता है। इसके लिए हिंदी में भेंटवार्ता, भेंट, बातचीत, मुलाकात, साहित्य भेंट, साहित्यिक वार्तालाप, साक्षात् वार्ता, समक्ष भेंट, साक्षात् वार्तालाप जैसे पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

साक्षात्कार पत्रकारिता जगत् की एक अद्भूत नूतन शैली है। जिसके अंतर्गत लेखक के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के संबंध में प्रामाणिक जानकारी प्राप्त की जा सकती है। साक्षात्कार की कई परिभाषाएँ इस प्रकार हैं-

1. **मानक हिंदी कोश :** इसमें साक्षात्कार के बारे में कहा गया है कि, ''विचार-विनिमय के उद्देश्य से प्रत्यक्ष दर्शन या मिलन, समाचार-पत्र के संवाददाता और किसी ऐसे व्यक्ति की भेंट या मुलाकात जिसमें वह वक्तव्य प्रकाशित करने के लिए मिलता है। इसमें प्रत्यक्षालाप, अभिमुख-संवाद किसी से उसके वक्तव्यों को प्रकाशित करने के विचार से मिलने का समावेश होता है।''

2. **ऑक्सफर्ड इंग्लिश डिक्शनरी :** ''किसी विषय-विशेष, विचार-विशेष, दृष्टि-विशेष,

मत-विशेष को लेकर औपचारिक विचार-विनिमय के लिए प्रत्यक्ष भेंट करने, परस्पर मिलकर विचार-विमर्श करने, समाचार-पत्र द्वारा प्रकाशन हेतु वक्तव्य लेने के लिए भेंट-कर्ता 'इंटरव्यू' या 'साक्षात्कार' है।''

3. **डॉ. रघुवीर :** इंटरव्यू से तात्पर्य है- समक्षकार, समक्ष भेंट अर्थात् साक्षात्कार। वह साक्षात् वार्तालाप होता है।

4. **ए डिक्शनरी ऑफ अमेरिकन इंग्लिश :** किसी व्यक्ति से समाचार-पत्र में प्रकाशन हेतु वार्ता द्वारा जानकारी एकत्र करना साक्षात्कार है।

5. **अमेरिकन सोशियों लैजिकल रिव्यू :** जिन प्रश्नों के द्वारा व्यक्ति की आंतरिक गहराई नापने का प्रयत्न किया जाता है, उन प्रश्नों के उत्तर इंटरव्यू द्वारा ठीक प्राप्त हो सकते हैं।

6. **वेब्स्टर्न थर्ड न्यू इंटरनैशनल डिक्शनरी :** साक्षात्कार विमर्श हेतु औपचारिक भेंट, निजी भेंट किसी लेखक, संवाददाता, रेडियो तथा दूरदर्शन के समीक्षक द्वारा प्रकाशन अथवा प्रसारण के उद्देश्य से किसी व्यक्ति से मिलकर सामग्री संकलित करना है।

सामान्यत: साक्षात्कार के लिए एक निश्चित प्रक्रिया अपनाई जाती है। इस प्रक्रिया के निम्न चरण होते हैं-

1. **व्यक्ति का चयन :** किस व्यक्ति का साक्षात्कार लेना है यह निश्चित करना चाहिए। व्यक्ति का चयन लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार, प्रमुख नेतागण, समाज के विशिष्ट व्यक्ति, कलाकार आदि मान्यवरों में से किया जाता है; कयोंकि ऐसे व्यक्तियों के विषय में जानने के लिए सामान्य लोग उत्सुक रहते हैं। आजकल साधारण और निम्न समझे जाने वाले उपेक्षित लोगों के भी साक्षात्कार लिए जा रहे हैं। यह प्रगतिशीलता बदलते युग और विचारों का द्योतक है।

2. **विषय का चयन :** किस विषय पर साक्षात्कार लेना है यह निश्चित किया जाता है। कवि से कविता पर, कलाकार से कला पर, नेता से राजनीति पर साक्षात्कार लिया जाता है। विषय से संबंधित अन्य बातें भी पूछने का दृष्टिकोण रहता है। कभी-कभी पात्र के जीवन, कृतित्व, प्रेरणा, रुचियों, प्रभाव, दिनचर्या, विचार आदि अनेक क्षेत्रों की जानकारी प्राप्त करने का लक्ष्य रहता है।

3. **योजना का निर्माण :** व्यक्ति और विषय का चुनाव हो जाने के पश्चात साक्षात्कार

लेनेवाला अपनी एक योजना बना लेता है। इसमें जिस व्यक्ति का साक्षात्कार लेना है, उससे समय लेता है, साक्षात्कार का स्थान तय करता है। साक्षात्कार में पूछे जाने वाले प्रश्नों और अन्य बातों की लिखित सूची बनाता है। इसके साथ अपने मानस में इसकी एक रूपरेखा रखता है। अनेक इंटरव्यूकार बिना कसी लिखित योजना के ही सफलतापूर्वक साक्षात्कार ले लेते हैं, परंतु दिमाग मे एक रूपरेखा तो रहती है; क्योंकि बिना किसी रूपरेखा के इंटरव्यूकार अपेक्षित बातें नहीं निकल सकता है। वह ऊपर ही ऊपर तैर कर वापस आ सकता है। वह गहराई में गोते नहीं लगा सकता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इंटरव्यूकार एक निश्चित प्रश्नावली बनाए और सिर्फ उसी के अनुसार ही पूरी तरह से चलता रहे यह आवश्यक नहीं है। कई व्यक्तियों के लिए एक-सी प्रश्नावली भी काम नहीं आ सकती। वह वार्तालाप स्थिति के अनुसार बातें निकलवा सकता है।

4. **भेंट वार्ता :** साक्षात्कार को मूर्त रूप देने के लिए इंटरव्यू-पात्र से प्रत्यक्ष भेंट की जाती है। पत्र, फोन अथवा कल्पना द्वारा भी संपर्क स्थापित किया जाता है। भेंट के दौरान इंटरव्यू-पात्र के विचारों को निकलवाते, प्रस्तावित प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। निर्धारित योजना के अनुसार साक्षात्कार चलता रहता है। बदलती हुई परिस्थिति और इंटरव्यू-पात्र की मन:स्थिति के अनुरूप इंटरव्यूकार वार्ता को मोड देता है। यदि कभी थोडा बहुत व्यवधान भी पडता है, तो वह स्थिति को कुशलतापूर्वक संभाल लेता है और साक्षात्कार को सफल बनाता है।

5. **बिंदु अंकन :** साक्षात्कार लेने के बाद इंटरव्यूकार मुख्य-मुख्य बातों को बिंदु-रूप में लिखता जाता है। बिंदु अंकन में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि कोई भी महत्त्वपूर्ण बात लिखने से छूट न जाए। तिथियाँ, व्यक्ति, संस्था, स्थान, घटनाओं, उद्धरण, सिद्धांत, वाक्य आदि का अंकन करना आवश्यक होता है। द्रुत-लेखन का अभ्यास इंटरव्यू के लिए लाभदायक रहता है। वह संकेतों से ही बिंदुओं का तत्काल अंकन करके वार्ताप्रवाह का भंग नहीं होने देता। इसके अतिरिक्त इंटरव्यू-पात्र के व्यक्तित्व, हाव-भाव-वातावरण, अपनी प्रक्रिया आदि का भी अंकन वह बिंदु-रूप में करता जाता है। अथवा स्मृति के आधार पर बाद में लिख लेता है।

6. **प्रस्तुतिकरण :** बिंदु-अंकन और वार्ता की स्मृति की सहायता से इंटरव्यूकार पूरा इंटरव्यू लिखता है। इंटरव्यू-पात्र के कथनों को यथासंभव उसी की भाषा में लिखने का प्रयास वह करता है। साक्षात्कार के विकास में वह अपनी शैली का भी समावेश करता है। साक्षात्कार का मसौदा तैयार करते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि उसका

प्रवाह बना रहे तथा कोई भी महत्त्वपूर्ण पक्ष छूटने न पाए। यथास्थान इंटरव्यू-पात्र के व्यक्तित्व का बाहय-अंकन, हाव-भाव, वहाँ का वातावरण, अपनी प्रतिक्रियाओं तथा टिप्पणियों का समावेश करता है; क्योंकि साक्षात्कार के सफल प्रस्तुतिकरण पर ही उसकी सफलता निर्भर करती है। इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह होती है कि प्राप्त उत्तरों को व्यवस्थित रूप में सजाना। उनको इस प्रकार सजाना चाहिए कि साक्षात्कार एक श्रृंखला बन जाए।

3.3.2.3 महत्त्व

साक्षात्कार की तैयारी करने से पहले उम्मीदवार को यह तथ्य भली-भाँति समझ लेना चाहिए कि वह जिस व्यवसाय, पद या प्रतियोगिता के लिए साक्षात्कार दे रहा है; क्योंकि व्यवसाय और पदानुरूप साक्षात्कार प्रविधि परिवर्तित हो जाती है। जैसे कि संघ लोक सेवा आयोग के साक्षात्कार में प्रश्न तो ज्यादा विचारात्मक होते हैं। इसलिए उम्मीदवार को विश्लेषणात्मक उत्तर देने के लिए अपने ऐच्छिक विषय राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय तथा सामाजिक गतिविधियों की पूरी जानकारी होनी चाहिए। इसके विपरित लिपिकीय या अन्य सामान्य परीक्षाओं में तथ्यपरक प्रश्न ज्यादा पूछे जाते हैं। इसकी भी कुछ ऐसी बातें हैं जो सामान्य रूप से हर साक्षात्कारदाता के लिए अनिवार्य है और साक्षात्कारदाता को इनकी जानकारी होना जरूरी है। ऐसी कुछ बातें इस प्रकार हैं-

1. आज्ञा प्राप्त होने पर कुर्सी पर बैठना चाहिए। झुक कर बैठना सुसंगत नहीं लगता। बार-बार पहलू बदलना भी ठीक नहीं। पैरों को फँसाकर नहीं बैठना चाहिए।
2. प्रश्नों की असलियत को समझने के उपरांत ही उत्तर अत्यंत शांत भाव से सुविचारित विषयानुकूल एवं स्पष्ट उच्चारण के साथ देना चाहिए।
3. प्रश्न का उत्तर देते समय प्रश्न के प्रति नकारात्मक रवैया अपनाते समय आत्मविश्वास होना चाहिए, जहाँ तक संभव हो 'शायद' या 'हो सकता है' जैसे संदेहास्पद वाक्यों जैसे प्रयोग से बचना चाहिए।
4. अगर आपका चयन नहीं हुआ है जैसे नकारात्मक शैली के प्रश्न से घबराना नहीं चाहिए। इस तरह के प्रश्न उम्मीदवार के धैर्य की परीक्षा होते हैं।
5. सिर खुजाना, पेन खोलना-बंद करना, मेज थपथपाना, हिलाना, बिना आवश्यकता के हाथ-पैर हिलाना, चेहरे की भाव-भंगिमाएँ बदलना आदि अपने कमजोर आत्मविश्वास की सूचना देते हैं।

6. साक्षात्कार के अंत में मुस्कुराते हुए साक्षात्कारकर्ता को धन्यवाद देकर यदि हाथ बढाए, तो हाथ मिलाकर बिना पीछे मूडकर देखे कमरे से बाहर जाना चाहिए।

7. उम्मीदवार को अपने संबंध में पूरी जानकारी होनी चाहिए अर्थात् जन्म, निवास, शैक्षिक योग्यता, विशेष उपलब्धियाँ, अभिरूचियाँ और संबंधित साक्षात्कार का स्वरूप अर्थात् व्यवसाय और पद की गरिमा एवं कार्य।

8. साक्षात्कार से जुडे व्यवसाय, उसके कार्य-क्षेत्र, उसके उत्पादन, उसके कार्य-बाजार, सामाजिक स्थिति आदि का पूर्वाभास और ज्ञान।

9. वेशभूषा स्वच्छ और सुरुचिपूर्ण हो।

10. प्रमुख राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं तथा वर्तमान समस्याओं की जानकारी और अपने स्पष्ट विचार।

11. साक्षात्कार लेने वालों के प्रति अभिवादन करना।

12. साक्षात्कार कक्ष में प्रवेश करते समय शरीर सीधा रखते हुए मुस्कुराते हुए प्रवेश करना चाहिए।

3.3.2.4 उपयोगिता

महत्त्वपूर्ण अवसरों पर साक्षात्कार की उपयोगिता दिखाई पडती है। जैसे कि साहित्यकार, राजनेता, कलाकार, खिलाडी आदि के जन्मदिन, षष्ठीपूर्ति, पुण्यतिथि या उपलब्धियो में वृद्धि के कारण संबंधित व्यक्ति या उन व्यक्तियों के संबंधियों, आलोचकों, मित्रों आदि से साक्षात्कार उपयुक्त होता है। जैसे कि दो अक्तूबर के लिए महात्मा गांधी की जन्मतिथि पर उनको श्रद्धांजली देने के उद्देश्य से और नई पीढी को उनके व्यक्तित्व से परिचित कराने हेतु गांधी जी के वंशजों, सहयोगियों आदि का साक्षात्कार प्रासंगिक होगा। तुलसी के जन्मशति पर किसी प्रख्यात तुलसी समालोचक से साक्षात्कार प्रासंगिक दिखाई पडता है या सचिन तेंदूलकर के कम उम्र के कप्तान बन जाने पर टीम पर पडनेवाले प्रभाव आदि के संबंध में गावसकर, कपिलदेव आदि सिनियर एवं विशेषज्ञों की प्रतिक्रिया और विचार जानना उचित होगा।

वास्तव में साक्षात्कार लेना भी एक कला है। इसमें बडे कौशल की आवश्यकता होती है। यह कार्य बडा व्यय-साध्य और कष्टप्रद है। इंटरव्यू-पात्र के पास जाना, उससे उसके जीवन और कार्य के आंतरिक रहस्य का ज्ञान प्राप्त करना, उसे लिखना, लिखकर फिर इंटरव्यू-पात्र के पास जाँचने के लिए भेजना और तब प्रकाशित कराना इस प्रकार एक साक्षात्कार में दो या तीन महिने

भी लगते हैं। किसी-किसी में तो छ: छ: महीने लग जाते हैं। कभी-कभी साक्षात्कार देनेवाला किसी प्रश्न के उत्तर के लिए अपनी कोई वस्तु सुझा देता है, तो उसे पढ़कर उस प्रश्न से संबंधित जानकारी देनी पडती है। इसमें और भी कठिनाई हो जाती है। संक्षेप में, साक्षात्कार का कार्य ही श्रद्धा का है। जिसमें अपनी व्यक्तिगत विचारधारा का आग्रह हो या जो अपनी विशिष्ट मान्यताओं के कारण दूसरों के विचारों के प्रति उदारता प्रदर्शित न कर सकेगा, तो वह साक्षात्कार का कार्य ही नहीं कर सकता है। क्योंकि श्रद्धावान ही किसी के जीवन के रहस्यों का सफलतापूर्वक उद्घाटन कर सकता है।

3.3.2.5 साक्षात्कार लेखन के क्षेत्र

वर्तमान युग में हिंदी गद्य साहित्य के अंतर्गत साक्षात्कार लेखन एक महत्त्वपूर्ण नई विधा के रूप में आज उभर आयी है। इस विधा ने साहित्य के क्षेत्र में काफी कम समय मे अपने स्थान विशेष के रूप में दस्तक दी है। इनके कई क्षेत्र दिखाई देते हैं, जिस पर विवेचन करना आवश्यक तथा प्रासंगिक लगता है।

3.3.2.6 साक्षात्कार के क्षेत्र : साहित्य तथा सामाजिक

हिंदी भाषा साहित्य में साक्षात्कार को विधा के रूप में स्थापित करने में पत्र-पत्रिकाओं की बडी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है, यद्यपि कई एक साक्षात्कार पुस्तकाकार रूप में भी उपलब्ध है। साक्षात्कार संबंधी अधिकांश पुस्तके साक्षात्कारों का संकलन है। इसमे कुछ अलग-अलग व्यक्तियों के अलग-अलग लोगों द्वारा लिए गये साक्षात्कारों पर आधारित संकलन है। कतिपय संकलन में एक व्यक्ति द्वारा अलग-अलग लोगों के साक्षात्कार प्रस्तुत किए गये है। कुछ एक पुस्तके एक व्यक्ति द्वारा एक ही व्यक्ति के साक्षात्कार की बृहत प्रस्तुति के रूप में भी मिलती है।

साक्षात्कार की भूमिका प्रस्तुत करते समय साहित्यिक विधा के रूप में साक्षात्कार के अंतर्सम्बन्धों का विवेचन, विश्लेषण भी आवश्यक है। आधुनिक हिंदी साहित्य मे नाटक, उपन्यास, कहानी निबंध जैसी व्यापक थरातल पर प्रतिष्ठित विधाओं के साथ-साथ संस्मरण, रेखाचित्र जीवनी और आत्मकथा साक्षात्कार, फीचर, रिपोर्ताज और कोलाज आदि अन्य विधाओं का भी समय-समय पर प्रवेश हुआ। इसमें संस्मरण रेखाचित्र जीवनी और आत्मकथा ने अपनी विशिष्ट स्थिति बना ली। जबकि फीचर, रिपोर्ताज कोलाज की पैठ बहुत प्रभावशाली ढंग से नही बन पायी। इन विधाओं की महत्ता समाचार और सूचना के संदर्भ में ही अधिक प्रभावशाली प्रतीत होती है। साक्षात्कार की स्थिती दोनों वर्ग की विधाओं से भिन्न है। अपने जन्मकाल से वर्तमान तक संख्या की दृष्टि से इसकी स्थिति

दूसरे वर्ग की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली है, और क्षेत्र विस्तार भी तीव्र है। बडे प्रकाशन समूह इस पर यथेष्ट ध्यान दे रहे है। और इधर काफी संकलन आ रहे है। छोटी, बडी सभी साहित्यिक पत्रिकाओं में लगभग नियमित रूप से साक्षात्कार प्रकाशित किये जाते है। गौरतलब यह भी है कि सूचना ..... की दृष्ठि से सक्रिय न केवल प्रिंट माध्यम बल्कि इलेक्ट्रॉनिक ..... के भी साक्षात्कार का एक प्रमुख औजार के रूप में अत्यधिक मात्रा में प्रयोग किया जा रहा है, इसलिए साक्षात्कार को लेकर असमंजस की स्थिती बनी हुई है। प्रश्न अभी कदाचित अनुसरित ही है कि साक्षात्कार की भूमिका को किस रूप में देखा जाय? साहित्य की स्वतंत्र विधा के रूप में सूचना देने के लिए संचार की विशिष्ट संरचना के तौर पर?

वस्तुत: इस संदर्भ में सर्वप्रथम साहित्य और समाचार के अंतर को देखना होगा। यद्यपि विज्ञान विषय की भाँति मानविकी से संबंधित विषय को परिभाषित करना और सीमाबद्ध रूपमे व्याख्याधित करना मुश्किल काम है, दरअसल यही तो इसका महत्त्वपूर्ण गुण है फिर भी समाचार के समानांतर रखकर खींच-तानकर कहा जा सकता है साहित्य का संबंध समझ से होता है। समाचार का तत्कालिक। जब तक समाचार केवल प्रिंट मीडिया का प्रस्तुतिकरण था तब तक स्वामित्व की दृष्टि से उसकी स्थिति फिर भी बेहतर थी। परंतु इलेक्ट्रॉनिक माध्यम ने इसे उत्तेजना और सनसनी फैलाने के कारक के रूप में तब्दील कर दिया है। यह सच्चाई सर्व विदित है।

आवश्यकता है साक्षात्कार की प्रासंगिकता को जानने की समझने की इसमे प्रमुख तथ्य है- समाज प्रतिनिधित्व यानी व्यक्ति नहीं, समूह अभिरूचि जरूरी है यानी जब कोई व्यक्ति सामान्य जीवन से हटकर कोई ऐसा समाजकार्य करता है जिसके पीछे समाजहित है या उसकी संभावना है तो वह समाज में चर्चित हो जाता है। वह व्यक्ति मीडिया हेतु खास बन जाता है और इस खास को जानना और पहचानता मीडिया का कर्तव्य बन जाता है।

सर्वस्व विदेश से आकर अपना जीवन गरीबों, कोटियों, बीमारों हेतु समर्पित कर देनेवाली मदर टेरेसा 'नोबल पुरस्कार' या 'भारत रत्न' पावर विशेष बन जाती है मतलब यह है कि समाज के बीच लोकप्रिय होना, समाज की रूचि व्यक्ति खास में होता, उसे मीडिया हेतु लोकप्रिय होना, जनता ही रुचि व्यक्ति विशेष में होता, उसे मीडिया हेतु विशेष बना देता है। कहने का आशय यह है कि साक्षात्कार उसका लिया जाये जो विशेष हो।

3.4 स्वयं-अध्ययन के लिए प्रश्न

1. ..... पत्रकारिता जगत् की एक अद्भूत नूतन शैली है।

   (क) साक्षात्कार (ख) रिपोर्ताज (ग) प्रत्यक्षालाप (घ) साहित्य

2. माध्यमों द्वारा किसी ..... व्यक्ति का विशेष मौके पर परिचय जानने हेतु साक्षात्कार आयोजित किया जाता है।

(क) सामान्य *(ख) असामान्य* *(ग) लोकप्रिय* *(घ) गरीब*

3. अखबार, पत्रिकाओं के साक्षात्कार हेतु भी ..... का उपयोग किया जाता है।

(क) टेपरिकार्डर *(ख) समाचार* *(ग) समाचार पत्र* *(घ) दूरदर्शन*

4. रेडियों और प्रिंटमीडिया हेतु होने वाली बातचीत ..... लोगों के मध्य होती है।

(क) दो *(ख) तीन* *(ग) चार* *(घ) पाँच*

5. दूरदर्शन के साक्षात्कार का ..... दूवा भी होता है कैमरामैन।

(क) प्रथम *(ख) द्वितीय* *(ग) तृतीय* *(घ) चतुर्थ*

6. साक्षात्कार के लिए ..... शैली का उपयोग होता है।

(क) प्रश्नोत्तर *(ख) डायरी* *(ग) वर्णनात्मक* *(घ) काव्यात्मक*

7. मालूम हो कि साक्षात्कार ..... विधा है।

(क) द्विपक्षीय *(ख) त्रिपक्षीय* *(ग) प्रथमपक्षीय* *(घ) चतुर्थपक्षीय*

8. परिस्थिति तथा व्यक्ति के अनुसार ..... का चयन किया जाता है।

(क) साक्षात्कारकर्ता *(ग) रेडियो*
(ख) साक्षात्कारदाता *(घ) दूरदर्शन*

9. साक्षात्कार लेने के लिए काल विशेष के आधार पर विषय से ..... को लिख लेना चाहिए।

(क) प्रश्नों *(ख) उत्तरों* *(ग) विचार* *(घ) समाचार*

10. प्रश्नावली तैयार करते समय ..... को सजग रहना अति जरूरी है।

(क) साक्षात्कारकर्ता *(ग) दर्शक*
(ख) साक्षात्कारदाता *(घ) श्रोता*

11. रिपोर्ताज विधा पर सर्वप्रथम शास्त्रीय विवेचन ..... ने किया।

(क) शिवदानसिंह चौहान *(ग) रांगेय राघव*
(ख) भगीरथ मिश्र *(घ) अज्ञेय*

12. रिपोर्ताज विधा पर सर्वप्रथम शास्त्रीय विवेचन ..... में प्रस्तुत किया।

(क) मार्च 1941 (ख) मार्च 1942 (ग) मार्च 1943 (घ) मार्च 1944

13. 'रिपोर्ताज' में ..... पर बल दिया गया है।

(क) वास्तविकता *(ग) संवाद-प्रधानता*

(ख) चरित्र-प्रधानता *(घ) उद्देश्य-प्रधानता*

14. 'रिपोर्ताज' का विकास ..... के युद्ध क्षेत्र से हुआ।

(क) युरोप (ख) जापान (ग) अमेरिका (घ) इंग्लैंड

15. रेडियो रिपोर्ताज ..... नहीं होते।

(क) लंबे या प्रदीर्घ *(ग) संक्षिप्त या प्रदीर्घ*

(ख) छोटे या प्रदीर्घ *(घ) अत्यंत-संक्षिप्त या प्रदीर्घ*

16. रिपोर्ताज ..... परिस्थितियों पर आधारित होता है।

(क) यथार्थ (ख) वास्तविक (ग) भौगोलिक (घ) ऐतिहासिक

17. ..... द्वारा लिखित समाचार 'रिपोर्ट' कहलाते हैं।

(क) संवाददाता (ख) रिपोर्टर (ग) सामान्य व्यक्ति (घ) विशेष व्यक्ति

18. ..... यह विधा युद्धभूमि में ही विकसित हुई।

(क) रिपोर्ताज (ख) साक्षात्कार (ग) संस्मरण (घ) आत्मकथा

19. ..... में घटना चित्रपट की तरह आँखों के सामने तेजी के साथ घूम जाती है।

(क) रिपोर्ताज (ख) साक्षात्कार (ग) संस्मरण (घ) आत्मकथा

20. हिंदी में रिपोर्ताज विधा प्रारंभ करने का श्रेय ..... पत्रिका को है।

(क) हंस (ख) विद्यावार्ता (ग) मधुमती (घ) विशाखा

3.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ

- ☞ **शिल्प** : मूर्ति
- ☞ **उपलब्धि** : प्राप्ति, ग्रहण की योग्यता, सिद्धि।
- ☞ **शैली** : लिखने की अदा, ढंग।

- ☞ **संदर्भ** : पहले के पत्राचार का हवाला देने हेतु।
- ☞ **व्यावसायिक संप्रेषण** : व्यावसायिक उद्देश्य से।
- ☞ **सचिव** : कार्यालय का प्रमुख अधिकारी।
- ☞ **रिपोर्ताज** : घटना का वर्णन।
- ☞ **संवाददाता** : खबर देनेवाला।
- ☞ **साक्षात्कार** : मुलाकात।
- ☞ **वाङ्मय** : साहित्य।

3.6 स्वयं–अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

1. *(क) साक्षात्कार*	2. *(ग) लोकप्रिय*	3. *(क) टेपरिकार्डर*
4. *(क) दो*	5. *(ग) तृतीय*	6. *(क) प्रश्नोत्तर*
7. *(क) द्विपक्षीय*	8. *(क) साक्षात्कारकर्ता*	9. *(क) प्रश्नों*
10. *(क) साक्षात्कारकर्ता*	11. *(क) शिवदानसिंह चौहान*	12. *(क) मार्च 1941*
13. *(क) वास्तविकता*	14. *(क) युरोप*	15. *(क) लंबे या प्रदीर्घ*
16. *(क) यथार्थ*	17. *(क) संवाददाता*	18. *(क) रिपोर्ताज*
19. *(क) रिपोर्ताज*	20. *(क) हंस।*	

3.7 सारांश

इस इकाई में रिपोर्ताज तथा साक्षात्कार के संबंध में सुचारु रूप से चर्चा की गई है। रिपोर्ताज तथा साक्षात्कार के अंतर्गत उसके स्वरूप, महत्त्व तथा उसकी उपयोगिता पर प्रकाश डाला गया है। रिपोर्ताज लेखन के क्षेत्रों के अंतर्गत वाणिज्य, विज्ञान तथा तकनीकी और साक्षात्कार लेखन के क्षेत्रों के अंतर्गत साहित्य तथा सामाजिक पर विस्तार से चर्चा की गई है।

3.8 स्वाध्याय

1. रिपोर्ताज के स्वरूप तथा महत्त्व पर प्रकाश डालिए।
2. रिपोर्ताज की उपयोगिता को समझाइए।

3. साक्षात्कार का स्वरूप तथा महत्त्व स्पष्ट कीजिए।
4. साक्षात्कार की उपयोगिता स्पष्ट कीजिए।
5. रिपोर्ताज के क्षेत्र-वाणिज्य, विज्ञान तथा तकनीकी पर प्रकाश डालिए।
6. साक्षात्कार के क्षेत्र-साहित्य तथा सामाजिक को स्पष्ट कीजिए।

3.9 क्षेत्रीय कार्य

1. किसी भी आँखों देखी घटना की आप रिपोर्ट तैयार कर सकते है।
2. किसी भी प्रख्यात साहित्यकार का साक्षात्कार ले सकते है।
3. किसी राजनीतिक नेता का साक्षात्कार ले सकते हैं।
4. किसी अकाल पीडितों पर आप रिपोर्ट लिख सकते हैं।

3.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

1. *''पत्रकारिता एवं संपादन कला''*, वर्मा नेहा।
2. *''जनसंचार और हिंदी पत्रकारिता''*, डॉ. तिवारी अर्जुन।
3. *''साहित्य विवेचन''*, 'सुमन' क्षेमचंद्र मलिक योगेंद्रकुमार।
4. *''जनमाध्यम और पत्रकारिता''*, दीक्षित प्रविण।
5. *''साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएँ''*, डॉ. भाटिया कैलाशचंद्र भाटिया रचना।
6. ''हिंदी साक्षात्कार : उद्‌भव आणि विकास'', सं. डॉ. खान एम. फिरोज।
7. *''आधुनिक पत्रकारिता''*, डॉ. तिवारी अर्जुन।
8. *''हिंदी पत्रकारिता''*, डॉ. मिश्र कृष्णबिहारी।
9. *''समाचारपत्र''*, राव एम. चेतापलि।
10. *''प्रेस-विधि''*, डॉ. त्रिखा नंदकिशोर।

❑ ❑ ❑

इकाई–4

दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता : स्वरूप, महत्त्व तथा उपयोगिता

दृश्य साहित्य लेखन के क्षेत्र : छायाचित्र, कार्टून
पत्रकारिता के प्रकार : खेल पत्रकारिता, सिनेमा पत्रकारिता, ग्रामीण पत्रकारिता

अनुक्रम

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 विषय–विवेचन

4.3.1 दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता : स्वरूप

4.3.2 दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता : महत्त्व

4.3.3 दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता : उपयोगिता

4.3.4 दृश्य साहित्य लेखन के क्षेत्र : छायाचित्र, कार्टून

4.3.5 पत्रकारिता के प्रकार : खेल पत्रकारिता, सिनेमा पत्रकारिता, ग्रामीण पत्रकारिता

1.4 स्वयं–अध्ययन के लिए प्रश्न

1.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ

1.6 स्वयं–अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

1.7 सारांश

1.8 स्वाध्याय

1.9 क्षेत्रीय कार्य

1.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

4.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद -

1. दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता से परिचित होंगे।
2. पत्रकारिता के स्वरूप की जानकारी होगी।
3. पत्रकारिता, छायाचित्र तथा कार्टून का महत्त्व समझ पाएँगे।
4. दृश्य साहित्य लेखन की उपयोगिता से परिचित होंगे।
5. छायाचित्र तथा कार्टून से अवगत होंगे।
6. खेल पत्रकारिता से अवगत होंगे।
7. सिनेमा पत्रकारिता की जानकारी होगी।
8. ग्रामीण पत्रकारिता के उपयोग से परिचित होंगे।

4.2 प्रस्तावना

जनसंचार माध्यमों में मुद्रण-माध्यम अन्य आधुनिक जन माध्यमों की अपेक्षा सबसे अधिक प्रभावात्मक माध्यम है। इसके अंतर्गत समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ, जर्नल इत्यादी माध्यम आते हैं। ये लिखित माध्यम आज अन्य माध्यमों की तुलना में अधिक विश्वसनीय माने जाते हैं। यह इसलिए विश्वसनीय माने जाते हैं कि वे स्वशासित होते हैं। विश्व के प्राय: सभी विकसित और विकासशील देशों में लगभग प्रत्येक पढा-लिखा दैनिक समाचार पत्र पढ़ता है। आज बिना समाचार पत्र के हम किसी भी आधुनिक समाज या शहर की कल्पना कर ही नहीं सकते। इन्हीं समाचार पत्र-पत्रिकाओं की विश्वसनीयता कायम रखने का कार्य दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता करते हैं। पत्रकारिता जन-सामान्यों में घटी हुई घटना का आँखों देखा सत्य विवरण पूरी वास्तविकता के साथ प्रस्तुत करने का प्रामाणिक प्रयत्न करती है। विविध मान्यवरों के अनुसार पत्रकारिता जनसेवा का एक सशक्त माध्यम है। इसका प्रमुख माध्यम अखबार है। आज इस पत्रकारिता को अभिव्यक्ति की एक कला मानी जाती है, जिसका अर्थ जनता के समक्ष लोककल्याण सम्बन्धी कार्यों को तथा उन कार्यों की जानकारी प्रस्तुत करना है। अपने देश में आजादी के पूर्व पत्रकारिता को जनसेवा के रूप में अपनाया गया था, किंतु आज इन्होंने व्यावसायिक दृष्टि आपनायी हुई दिखाई देती है। ऐसी यह पत्रकारिता हिंदी साहित्य में आज गद्य साहित्य की एक सशक्त विधा के रूप में विकसित हो रही है, जिसमें

सभी प्रकार के पत्रकारों के कार्यों-कर्तव्यों का तथा लक्ष्यों का विवेचन होता है। पत्रकारों के इसी कर्तव्यों को प्रस्तुत करनेवाली पत्रकारिता का मुख्य ध्येय सूचना देना है अर्थात् घटी हुई घटना की सही-सही सूचना जनता तक पहुँचना पत्रकारिता का मुख्य ध्येय होता हैं। समाज प्रबोधन, समाजहित के लिए इसका उपयोग किया जाता है। आज मनुष्य-जीवन से जुड़े हर क्षेत्र में पत्रकारिता ने अपना स्थान निर्माण किया हुआ दिखाई देता है। खेल क्षेत्र, कृषि क्षेत्र, ग्रामीण क्षेत्र, शहरी क्षेत्र, वैद्यकीय क्षेत्र, सिनेमा जैसे सभी क्षेत्रों में पत्रकारिता ने अपनी पहचान बनायी हैं।

4.3 विषय-विवेचन

4.3.1 दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता : स्वरूप

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद हमारे देश में पत्रकारिता का काफी विकास हुआ दिखाई देता है। हमारे प्रजातंत्र में इसे व्यवस्था का चौथा स्तंभ मानकर उसका विशेष महत्व प्रमाणित किया गया है। पौधों और वृक्षों के 'पत्ते' आदि का पर्यायवाची शब्द 'पत्र' आज भी प्रचलित है। किसी के द्वारा आवश्यक सूचना जिस उपकरण से दी जाती है, उसे भी पत्र ही कहते हैं। इस प्रकार के सूचना या संदेशों को 'समाचार' भी कहा जाता है। इन्हीं समाचारों के पर्चों को अंग्रेजी में 'न्यूज पेपर' कहा जाता था। इसी अंग्रेजी शब्द का हिंदी नामकरण 'समाचार पत्र' हो गया है। जो लोग इन समाचार पत्रों के लिए सूचनाओं के संकलन का काम करते थे, उन्हें अंग्रेजी में 'जर्नलिस्ट' तथा उनके व्यवसाय को 'जर्नलिज्म' कहा जाता है। 'जर्नल' शब्द मूलत: 'फ्रेंच' भाषा है। यह 'जर्नी' शब्द से निकला है, जिसका अर्थ है- दिन भर के कार्यों का ब्योरा देना और 'जर्नल' का शाब्दिक अर्थ है- दैनिक विवरण। इसी दैनिक विवरण शब्द ने आगे चलकर ''दैनिक-समाचार पत्र'' अर्थ ग्रहण कर लिया। अत: समाचार पत्रों से सम्बन्धित व्यवसाय का नाम 'पत्रकारिता' हो गया। जो अंग्रेजी 'जर्नलिज्म' का हिंदी रूपान्तर है। आज यही पत्रकारिता एक ओर साहित्यिक दृष्टि से नई गद्य विधा के रूप में विकसित हो चुकी है, तो दूसरी ओर सामाजिक क्षेत्र में जनसेवा का सशक्त माध्यम बनी है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने पत्रकारिता को सेवाकार्य कहा है। पराधीनता के कालखंड में भारतीय जनता को जागृत करने और राष्ट्रीय चेतना के लिए पत्रकारिता का विकास हुआ था। आज के वैज्ञानिक युग में वह एक पेशा बनकर उसका महत्त्व दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है। पत्रकारिता का प्रथम रूप अखबार है। प्राप्त हुई सूचनात्मक जानकारी के आदान-प्रदान के लिए पत्रकार अखबार, समाचार पत्र, पत्र-पत्रिकाएँ आदि माध्यमों का उपयोग करता है। इसे अंग्रेजी में प्रिंट-मिडिया कहते हैं। अखबार के जरिए पत्रकार दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों में होनेवाली हर एक घटना की जानकारी देता है। पहले अखबार के लिए खबरें प्राप्त करना पत्रकारों के लिए सहज सम्भव नहीं

था, परन्तु आज ई-मेल द्वारा मिनटों में दुनिया के किसी भी कोने से खबर माँगना सहज सम्भव हो चुका है। संगणक के विकास से पत्रकारिता का स्वरूप भी विकसित हो चुका है। रेडियो जैसे श्राव्य माध्यमों या दूरदर्शन जैसे दृश्य माध्यमों में भी आज पत्रकारिता का स्वरूप पहले की अपेक्षा अधिक व्यापक तथा महत्वपूर्ण बन चुका है। आज के वैज्ञानिक युग में हर क्षेत्र में हुए संगणकीकरण से पत्रकारिता का स्वरूप अत्यंत व्यापक तथा दिन-ब-दिन विकसित होता हुआ दिखाई देता है।

समग्रत: पत्रकारिता का स्वरूप अत्यंत व्यापक है। वह आज जीवन का पर्याय-सा बन गया है। जीवन के हर क्षेत्र में उसका महत्त्व अनिवार्य बन चुका है। यही कारण है कि आज पत्रकारिता के जितने आयाम हैं, वे प्रत्येक क्षेत्र में कार्यरत हैं। पत्रिका के ग्रामीण एवं आंचलिय परिवेश का विकास होने से ग्रामीण जनता में जागरूकता आयी है। खेल पत्रकारिता, सिनेमा पत्रकारिता एवं साहित्यिक पत्रकारिता का आज मानव जीवन में विशिष्ट स्थान बना है। दृश्य-श्राव्य माध्यमों के विस्तार के कारण दूरदर्शन, आकाशवाणी, संगणक, मोबाईल आदि पत्रकारिता के नये आयामों के रूप में समाज मन में प्रतिष्ठित हो चुके हैं। अत: आज के वर्तमान युग में पत्रकारिता का स्वरूप व्यापक, आकर्षक एवं सुरूचिपूर्ण बना हुआ दिखाई देता है।

4.3.2 दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता : महत्त्व

मनुष्य के जीवन में अनेक प्रकार की घटनाएँ घटती रहती हैं। उनमें से कुछ घटनाएँ व्यक्ति को आनंदित करती हैं, तो कुछ घटनाएँ व्यथित कर देती हैं। मानव जीवन विविधताओं से भरा हुआ है। नित नए अनुसंधान ने मानव जीवन को बहुआयामी बना दिया है। यही बात पत्रकारिता के क्षेत्र में लागू होती है; क्योंकि वर्तमान युग संगणकीकरण का युग है। अब वह समय नहीं रहा जब पत्रकारिता का एकमात्र उद्देश्य देश को स्वाधिनता प्रदान करना ही था। आज पत्रकारिता का क्षेत्र और महत्त्व विस्तृत और व्यापक हो गया है। इसी व्यापकता के कारण पत्रकारिता अनेक रूपों में सामने आ रही है। वर्तमान पत्रकारिता केवल समाचार पत्र-पत्रिकाओं तक ही सीमित नहीं रही है। अंत: संचार के विभिन्न माध्यमों जैसे-दूरदर्शन, सिनेमा, आकाशवाणी आदि क्षेत्रों साथ ही इसका संगणक, मोबाईल तक विस्तार हो गया है। पत्रकारिता का जितना स्वरूपगत व्यापक विकास हुआ है, उतना ही वर्तमान युग में उसका महत्त्व भी बढ़ गया है। यही कारण है कि आज पत्रकारिता को प्रजातंत्र का ''चौथा खम्बा'' माना जाता है। कुछ लोग तो उसे ''जनता की संसद'' मानते हैं। कारण कि वह विविध जनसमस्याओं को प्रशासन के सम्मुख प्रस्तुत करके उस पर रचनात्मक कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करती रहती है। इसके अतिरिक्त आज

पत्रकारिता का महत्त्व इसलिए भी है कि वह आज केवल हमें हमारे समाज, देश की समस्याओं तथा विचारों से ही परिचित नहीं कराती, तो वह सम्पूर्ण विश्वभर की घटनाओं को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करती है। व्यावसायिकता की दृष्टि से भी पत्रकारिता का महत्त्व काफी बढ़ गया है। आज उसे ''सामूहिक ज्ञान का व्यवसाय'' माना जाता है। क्योंकि आज इसी के माध्यम से जनसामान्यों के अज्ञान को दूर करने के लिए प्रबोधनात्मक चर्चा तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि का विकास किया जाता है। वर्तमान समय में पत्रकारिता का महत्त्व इतना बढ़ गया है कि आज की पत्रकारिता समय के साथ समाज की दिग्दर्शिका और नियामिका बनकर समाज के हर तबके को सही ज्ञान देकर विकासात्मक प्रगति की प्रक्रिया में केवल सम्मिलित होने के लिए प्रोत्साहित ही नहीं करती, तो वह उसके समन्वित विकास के लिए सतत प्रयत्नशील रहती है। यही सबसे श्रेष्ठ महत्त्व पत्रकारिता का है।

4.3.3 दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता : उपयोगिता

दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता का प्रमुख उपयोग सूचना देना है तथा सूचनाओं को समाचार के रूप में प्रस्तुत करना है। जो भी सत्य, वास्तविक है, वह समाचार का रूप तभी लेता है, जब उसका संबंध व्यापक मानव-जीवन से जुडता है। संसार में प्रतिदिन कुछ न कुछ सामान्य या असामान्य घटनाएँ घटती रहती है और इन्हीं घटनाओं में से मनुष्य की जानकारी तथा दिलचस्पी के लिए कुछ का वर्णन या विवरण समाचार पत्रों में दिया जाता है। ताकि जन समुदाय को उन घटनाओं से अवगत कराया जा सके तथा उन घटनाओं के संबंध में उनकी अपनी राय बनायी जा सके तथा उचित-अनुचित के विश्लेषण की शक्ति बढ़ाते हुए उन्हें उचित का समर्थन और अनुचित का विरोध करने के लिए प्रेरित किया जा सके। यह कार्य बेहद जटिल होता है, फिर भी यही जटिल कार्य करने के लिए समाचार वाचक को सहजता से करने के लिए प्रेरित करना दृश्य साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता का प्रमुख उपयोग रहता है।

'जनहित' पत्रकारिता का एक उपयोगात्मक लक्ष माना जाता है। इसके अंतर्गत सामायिक विषय जिसके संबंध में आम आदमी जानकारी प्राप्त करना चाहता है। जैसे कि आर्थिक विकास, सामाजिक कार्य, उत्सव, मेले, सांस्कृतिक कार्य, खेल, मानवी संबंध, राष्ट्र के आपसी संबंध, रोचक घटनाएँ, मनोरंजन, न्यायालय के निर्णय, चुनाव के नतीजे आदि की सही-सही जानकारी देकर जनहित की रक्षा करना पत्रकारिता का कार्य बनता है। इसके अतिरिक्त वर्तमान युग में पत्रकारिता का उपयोग व्यक्ति के निजी जीवन से लेकर अंतर्राष्ट्रीय संबधों तक की सही-सही जानकारी देना, समाज के प्रबोधन से लेकर विश्वशांती तक के मूल्यों का महत्त्व समझाना, राष्ट्रप्रेम, देशप्रेम, राष्ट्रीय विकास,

बदलते विकासात्मक संबंध, विविध समस्याओं पर स्वतंत्र चर्चा, प्राचिन, ऐतिहासिक बातों का महत्त्व तथा वर्तमान और भविष्य के समाज जीवन का नियोजन आदि बातों की सत्य तथा वास्तविक पहचान पत्रकारिता अर्थात दृश्य साहित्य लेखन की उपयोगिता ही है, इसमें किसी तरह की दो राय नहीं है।

4.3.4 दृश्य साहित्य लेखन के क्षेत्र : छायाचित्र तथा कार्टून

दृश्य साहित्य लेखन के क्षेत्रों में आज छायाचित्र तथा कार्टून नये संचार माध्यम बनकर प्रस्तुत होने लगे हैं। मानो आज इन दोनों को माध्यमों के रूप में साहित्य के क्षेत्र में स्वीकारा जाने लगा है। इनमें से छायाचित्र पहले कला के रूप में स्वीकारा गया था, किन्तु आज इसके माध्यम से विशेष प्रसंगों, घटनाओं को चित्रबध्द करके संग्रहित रखा जाने लगा है। प्रकृति से लेकर विविध क्षेत्रों से जुड़ी अनेक यादगार घटनाओं का छायाचित्रों के रूप में संकलन होता है। तो उन्हीं में से एक चित्र प्रस्तुत करके उन पर प्रश्न पुछे जानेवाले हैं। उदाहरणार्थ प्रश्नपत्र में बाजार का या किसी सभा का या किसी प्राकृतिक आपदाओं से संबंधित छायाचित्र छपकर दिया जाएगा और उसमें दिखाई देनेवाली बातों पर प्रश्न दिए जाऐंगे, जिसके उत्तर छात्रों को देने हैं। यही बात कार्टून से भी संबंधित है। कार्टून भी वर्तमान युग के समाचार पत्र से लेकर विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रसारित होनेवाली आधुनिक लेखन कला है। इसके माध्यम से कार्टूनकार अधिकतर राजनीतिक, सामाजिक क्षेत्रों में निर्माण की गई या निर्माण हुई अनमेल व्यवस्था पर व्यंग्य कसता है। इसी तरह के प्रसारित हुए कार्टून के चित्र प्रश्नपत्र में दिया जाएंगे और उस पर प्रश्न पूछे जाएंगे।

4.3.5 पत्रकारिता के प्रकार : खेल पत्रकारिता, सिनेमा पत्रकारिता, ग्रामीण पत्रकारिता

4.3.5.1 खेल पत्रकारिता

खेल समाचार आज जनरूचि के अन्तर्गत आने लगी है। यही कारण है कि आज सभी समाचार पत्रों में खेल पत्रकारिता के अनिवार्य पृष्ठ और स्तम्भ होते हैं। इसके अतिरिक्त खेल समाचारों से सम्बन्धित अनेक स्वतंत्र पत्रिकाएँ भी खेल पत्रकारिता के अन्तर्गत आ रही है। इसके साथ ही आज अनेक खेलों पर स्वतंत्र पत्रिकाएँ निकल रही है। वैसे तो खेल जगत् के रोमांचक क्रिया कलापों पर आधारित क्रीडा पत्रिका का आरम्भ हिंदी में आजादी के बाद ही हुआ है। सन् 1951 में नई दिल्ली में प्रथम एशियाई खेल आयोजित था। उसी समय से खेल पत्रकारिता का हिंदी में आरम्भ माना जा सकता है। कालांतर में रेडियो और दूरदर्शन के माध्यम से राष्ट्रीय एशियाई

और ओलंपिक गेम्स सभी को देखना, सुनना संभव हो गया। खेल को जिज्ञासा और कौतुहल का विषय खेल पत्रकारिता ने ही दिया है। आधुनिक बदलती जीवन पद्धति में खेलों का महत्त्व दिन-ब-दिन बढता जा रहा है। खेल का मनुष्य के जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। खेल के कारण स्वास्थ्य अच्छा रहता है। आज कल सभी खलों में से क्रिकेट को अत्यधिक प्रसिद्धि मिल गयी है।

पत्रकारिता की दृष्टि से देखे तो हिंदी खेल पत्रकारिता का क्षेत्र अत्यंत विशाल रहा है। ऐसा माना जाता है कि जिनके पास शब्दों का भंडार है तथा जिनकी लेखनी में नया मोड देने की या नई विधा से पाठकों को आकर्षित करने की क्षमता है, उन्हें वास्तव में हिंदी क्रीडा लेखन के सेवा से बढ़िया मौका अन्य क्षेत्र में शायद ही मिल सकता है। खेल पत्रकारिता का मतलब एक जगह पर बैठे-बैठे केवल सूचना एकत्रित करना नहीं है। वस्तुत: स्वयं प्रत्यक्ष मैदान में जाकर स्वतंत्र रूप से आँखों देखी रपट तैयार करना असल में खेल पत्रकारिता है। साथ ही वे अधिकारपूर्वक खेलों पर लिख सकते हैं। इसके अतिरिक्त उनमें खेल तथा खिलाडी की सभी विशेषताओं की जानकारी होना अनिवार्य होता है। उन्हें खेल का स्तर, खेल की स्थिति, टीम का चयन, हार-जीत का अनुमान आदि का ज्ञान भी होना चाहिए। खिलाडियों को प्रेरणा देने की दृष्टि से उनमें जो कमियाँ या दोष है, उनकी आलोचना करना भी इस पत्रकारिता का लक्ष्य होता है। खेल समीक्षक अपने ज्ञान तथा अनुभव के आधार पर यह कार्य अधिक अच्छे ढंग से करते रहते हैं। इसी तरह खेल पत्रकारिता में खिलाडियों की प्रशंसा तथा समीक्षा दोनों भी समय-समय पर की जाती है। वर्तमान युग में हर एक समाचार पत्र में खेल से संबंधित एक पन्ना रहता है। साथ ही आज कल हिंदी पत्र-पत्रिकाओं के क्षेत्र में क्रिकेट के साथ अलग-अलग खेलों की सूक्ष्म जानकारी देनेवाली ''क्रिकेट टुडे'', ''खेल टुडे'', ''सक्सेस मिरर'', ''भारतीय कुस्ती पत्रिका'' आदि पत्रिकाएँ प्रसारित हो रही हैं, जो खेलो से सम्बन्धित हैं।

4.3.5.2 सिनेमा पत्रकारिता

सिनेमा क्षेत्र में काम करनेवाले कलाकारों की लोकप्रियता अत्यधिक रहती है। उनकी लोकप्रियता तथा उनके व्यक्तिगत जीवन के रंगीन किस्से समय-समय पर छपकर आते रहते हैं। सिनेमा पत्रकारिता का यह सिल-सिला ऐतिहासिक दृष्टि से देखे, तो सन् 1931 में प्रकाशित 'मंच' नामक पत्रकारिता से शुरूआत हुई। तब से लेकर आज तक सिनेमा पत्रकारिता की संख्या में काफी वृद्धि हुई दिखाई देती है। आज लगभग सौ से अधिक पत्रिकाएँ मुंबई, दिल्ली और कलकत्ता से प्रकाशित हो रही है। जिससे यह प्रतित होता है कि आज के वर्तमान युग में हिंदी पत्रकारिता के

क्षेत्र में सिनेमा पत्रकारिता ने अपना अलग-सा अस्तित्व स्थापित करके सबसे अधिक लोकप्रियता प्राप्त की है। दूसरी ओर उनकी जिम्मेदारी भी उतनी ही बढ़ गई है कि वे केवल नायक-नायिकाओं के रोमांस के किस्से प्रसारित करने के बजाय उन कलाकारों के संदर्भ में रोचक सामग्री प्रस्तुत करें। कलाकारों के संघर्षमय जीवन तथा उनके विभिन्न पहलुओं से संबंधित प्रामणिक तथा आवश्यक सामग्री प्रकाशित करें।

वर्तमान युग में सिनेमा पत्रकारिता संचार का एक सशक्त माध्यम बन गई है। सिनेमा के निर्माण पर इसी के माध्यम से प्रकाश डाला जाता है। इसी में नई आनेवाली फिल्मों की समीक्षा प्राप्त की जाती है; जिसे पढ़कर प्रेक्षक सिनेमा देखता है या उससे संबंधित अपनी राय बनाता है। इसलिए इस पत्रकारिता में पत्रकारों को गहन अध्ययन तथा परिश्रम करना आवश्यक होता है। आज सिनेमा के साथ-साथ सिनेमा समारोह, राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय सिनेमा समारोह, सिनेमा उद्योग आदि की जानकारी भी दी जाने लगी है। आज सिनेमा आम आदमी के संघर्षों, आशा-आकांक्षाओं और उपलब्धियों को प्रतिबिंबित करने लगा है। युग को चित्रित करनेवाला सिनेमा आज राष्ट्र की नियति का निर्धारक बना है। इसलिए सिनेमा पत्रकारिता में कार्यरत हर एक पत्रकार का एक नैतिक दायित्व बन चुका है कि वह सिनेमा में व्यक्त ठोस संघर्षशीलता, संकल्प, दृढ-चरित्र, कर्तव्य परायणता तथा राष्ट्रप्रेम के उदत्त भावों को अपनी पत्रकारिता में प्रस्तुत करें, ताकि आज का सिनेमा मानवीय जीवन स्तर को ऊँचा उठाने में प्रेरक शक्ति का प्रतीक बन सके। इसी तरह का कार्य करनेवाली सिनेमा पत्रकारिता के क्षेत्र में सैकडों पत्रिकाएँ प्रसारित हो रही हैं। जैसे- 'मायापुरी', 'फिल्मफेअर', 'माधुरी', 'सरिता', 'चाँदनी', 'रूपतारा', 'सिनेमाया', 'सिनेब्लिज', 'स्टारडस्ट', ''फिल्मी कलिया'', ''फिल्मी दुनिया'' आदि।

4.3.5.3 ग्रामीण पत्रकारिता

हमारे भारत जैसे विशाल तथा ग्रामीण जीवन वाले राष्ट्र में पत्रकारिता के रूप में ग्रामीण पत्रकारिता विशेष महत्त्व है। इसका कारण यह है कि देश की लगभग 70% जनता गाँवों में रहती है। आजादी के इतने सालों बाद भी उन गाँवों में पिछडापन नजर आता है। उनके पिछडेपन को दूर करने के लिए ग्रामीण पत्रकारिता का उपयोग किया जाता है। डॉ. मदन मोहन गुप्त जी के अनुसार- ''जिन समाचार पत्रों में 40% से अधिक सामग्री गाँवों के बारे में कृषि, पशुपालन, वीज, कीटनाशक, पंचायती राज, सहकारिता आदि विषयों पर होगी, उन्हीं पत्रों को ग्रामीण पत्र माना जाएगा।'' इसके अतिरिक्त परम्परागत लोक कला, लोक संस्कृति, कुटीर उद्योग, ग्रामीण स्वास्थ्य तथा हरित क्रांति के विकास के लिए समर्पित पत्रकारिता ग्रामीण पत्रकारिता कही जा सकती है। इसी

दृष्टि से देखे तो ग्रामीण पत्रकारिता का आशय ऐसी पत्रिकाओं से है, जो ग्रामीण समस्याओं को उभारे और ग्राम विकास योजनाओं को निर्धारित करने में योगदान दें। साथ ही साथ गाँवों में नई चेतना निर्माण करना, गाँवों में वैज्ञानिक ज्ञान का प्रचार-प्रसार करना, विविध प्रकार की समस्याओं का निवारण करना, खेती के बारे में जीवन अविष्कारों (खोजों) की जानकारी देना जैसे आशयात्मक उद्देश्य रहता है। वर्तमान युगीन हिंदी में ग्राम्य जीवन को समर्पित पत्रकारिता अधिक मात्रा में उपलब्ध अथवा प्रसारित नहीं हो रही है। फिर भी 'कृषि जागरण', ''माटी'', 'दैनिक भास्कर', ''कुरूक्षेत्र'', ''भारत मित्र'', ''दिनमान'', ''आजकल'' आदि पत्र-पत्रिकाएँ ग्रामीण जीवन का लेखा-जोखा अत्यंत प्रामाणिकता से हमारे सामने प्रस्तुत करते हुए दिखाई देती है।

4.4 स्वयं-अध्ययन के लिए प्रश्न

1. पत्रकारिता ..... सेवा का एक सशक्त माध्यम है।
2. ..... पत्रकारिता का प्रमुख स्वरूप है।
3. पत्रकारिता का मुख्य ध्येय ..... देना है।
4. प्रजातंत्र व्यवस्था में ..... को चौथा खंबा माना गया है।
5. अंग्रेजी ''न्यूज पेपर'' का हिंदी नामकरण ..... है।
6. अंग्रेजी 'जर्नलिज्म' का हिंदी रूपान्तर ..... है।
7. महात्मा गांधी जी ने पत्रकारिता को ..... कहा है।
8. ..... पत्रकारिता का नया आयाम है।
9. कुछ लोग पत्रकारिता को जनता की ..... मानते हैं।
10. आज ..... को ''सामूहिक ज्ञान का व्यवसाय'' कहा जाता है।

4.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ

1. **जनसेवा** : लोक, सामान्य जनता की सेवा।
2. **लक्ष्य** : उद्देश्य, प्रमुख ध्येय।

3. **समाजहित** : लोगों की भलाई, लोककल्याण।

4. **आंचलिय** : ग्राम जीवन से संबंधित।

5. **दिग्दर्शिका** : मार्ग दर्शानेवाली।

4.6 स्वयं–अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

1. *जनसेवा*
2. *अखबार*
3. *सूचना*
4. *पत्रकारिता*
5. *समाचार पत्र*
6. *पत्रकारिता*
7. *सेवाकार्य*
8. *मोबाईल/संगणक*
9. *संसद*
10. *पत्रकारिता*

4.7 सारांश

पत्रकारिता जनसंचार का सबसे महत्वपूर्ण माध्यम है। उसका मुख्य उद्देश्य सूचना देना तथा सूचनाओं को समाचार के रूप में प्रस्तुत करना है। महात्मा गांधी जी ने इसे सेवा–कार्य कहा था। इसे 'जनता की संसद' तथा प्रजातंत्र में चौथा खम्बा माना जाता है। वर्तमान युग में पत्रकारिता अपने विचारों को जनता तक पहुँचाने का एक सशक्त माध्यम है, जिसका उद्देश्य अपने आस–पास घटनेवाली घटनाओं, खबरों को एकत्रित करना, उनका विवेचन करके उन्हें पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से जनता तक पहुँचाना है। इसीकारण आज पत्रकारिता पूरे विश्व की एक ऐसी दैनंदिनी बन चुकी है, जो समाज को दूरदृष्टि प्रदान करती है। वह अपने समय के समाज के साथ प्रचलित व्यवस्था की कमियों, गलतियों तथा बुराइयों को उजागर करके अत्यंत निर्भयता से उन्हें दूर करने

का प्रयास करती है। आज दुनिया का कोई भी ऐसा विषय नहीं है, जो पत्रकारिता के क्षेत्र में न आता हो और पत्रकार उसके बारे में जनसामान्यों को उसकी जानकारी न देता हो। अर्थात् पत्रकारिता आज के वर्तमान युग में मानव जीवन की विविधताओं, नित्य घटित होनेवाली नई-नई घटनाओं को शीघ्र गति से दुनिया के कोने-कोने में पहुँचाती है। अखबार या समाचार पत्र इसका पहला माध्यम था। मगर संगणक के विकास के साथ-साथ पत्रकारिता के स्वरूप में भी अकल्पित विकास हुआ है। आज दूरदर्शन, रेडियो, मोबाईल (ई-मेल सेवा, वॉटस्अप) आदि के माध्यम से पत्रकारिता दुनिया के किसी भी कोने से मिनटों में सूचना प्राप्त कर सकती है या सूचनाएँ दुनिया के हर एक कोने में भेज सकती है। उसके स्वरूपगत विकास की व्यापकता इतनी बढ गई है कि आज पत्रकारिता के विविध प्रकार अपने-अपने क्षेत्र में स्वतंत्र रूप में कार्य करते हुए दिखाई देते हैं। जैसे खेल पत्रिकारिता, ग्रामीण पत्रकारिता, सिनेमा पत्रकारिता, सांस्कृतिक, प्रबोधनात्मक, विकासात्मक आदि। इन सभी प्रकारों में कार्यरत वर्तमान युग की पत्रकारिता अपना दायित्व अत्यंत प्रामाणिकता से निभाती हुई दिखाई देती है।

4.8 स्वाध्याय

❑ दीर्घोत्तरी प्रश्न

1. दृश्य-साहित्य लेखन तथा पत्रकारिता का स्वरूप स्पष्ट कीजिए।
2. पत्रकारिता का महत्त्व बताकर उसकी उपयोगितता पर प्रकाश डालिए।
3. खेल पत्रकारिता का सामान्य परिचय दीजिए।
4. सिनेमा पत्रकारिता का महत्त्व स्पष्ट कीजिए।
5. ग्रामीण पत्रकारिता की विस्तृत जानकारी दीजिए।

4.9 क्षेत्रीय कार्य

1. अपने इलाके में प्रसारित होनेवाले प्रादेशिक समाचार पत्र के कार्यालय में जाकर पत्रकारिता की जानकारी प्राप्त कीजिए।
2. अपने आसपास पत्रकारिता का कार्य करनेवाले पत्रकार से साक्षात्कार कीजिए।
3. अपने आसपास घटी हुई किसी भी घटना की सूचना लिखकर समाचार पत्र के कार्यालय में दीजिए।

4.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

1. हिंदी में प्रकाशित होनेवाली खेल, कृषि, सिनेमा, विज्ञान, संस्कृति आदि क्षेत्रों से संबंधित पत्र-पत्रिकाओं का संग्रह करके उनका अध्ययन कीजिए।
2. दैनिक अखबारों में प्रसारित होनेवाले छायाचित्र तथा कार्टुनों का निरीक्षण कीजिए।

❑ ❑ ❑